1857 की कहानियां

अंतर्भारतीय पुस्तकमाला

1857 की कहानियां

ख्वाजा हसन निज़ामी

अनुवाद

जगदीश चंद्र

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

ISBN 81-237-1592-7

पहला संस्करण : 1976
तीसरी आवृत्ति : 2001 (*शक* 1922)

Original Title : Begmaat Ke Aansu *(Urdu)*
Translation : 1857 Ki Kahaniyan *(Hindi)*
रु. 19.00
निदेशक, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, ए-5 ग्रीन पार्क
नयी दिल्ली-110 016 द्वारा प्रकाशित

भूमिका

शम्सुल-उलेमा (प्रकांड विद्वान) ख्वाजा हसन निज़ामी देहलवी का जन्म सन् 1880 में हुआ था और देश की आजादी के बाद सन् 1955 में उनका निधन हुआ। मैंने उनको अपने विद्यार्थी जीवन में और उनके निधन से कुछ महीने पहले भी देखा था। उनकी वेश-भूषा एक जैसी ही थी – गेरुआ लंबा कुर्ता, फकीराना दुपट्टा – मशायख की टोपी,[1] लंबे लहराते बाल, आंखों में आकर्षण, बातचीत में मोह लेने का प्रभाव और वाणी जैसे अमृत में घुली हुई।

ख्वाजा हसन निज़ामी ने पांच सौ से अधिक किताबें लिखी हैं जो भाषा और शैली में उर्दू में अद्वितीय हैं। दिल्ली की टकसाली भाषा में उनके छोटे-छोटे वाक्य दिल पर गहरा असर छोड़ते हैं और आंखों के सामने तस्वीर-सी खींच देते हैं। भाषा की इसी सादगी, सहजता और प्रवाह के कारण ही उनको "मुसव्विरे फितरत" (प्रकृति का चितेरा) कहा जाता है।

ख्वाजा हसन निज़ामी की शैली पर अब्दुल हलीम 'शरर' (1860-1926) और मुहम्मद हुसैन आजाद (1830-1910) का गहरा प्रभाव है। उनके गद्य में मुहावरों का चटखारा है और वे अपनी भारतीय बुनियादों से अनभिज्ञ भी नहीं हैं। उसमें चुटकलों का-सा मजा है, चुटकियां और गुदगुदियां हैं लेकिन दर्द और संवेदना तो बेमिसाल है।

ख्वाजा हसन निज़ामी ने अपने सहपाठी और उत्पीड़ित शहजादों के संग उर्दू सीखी थी, जो गदर के बाद बड़ी संख्या में बस्ती हज़रत निज़ामुद्दीन और कूचा चेलान् दिल्ली में रहते थे। उनकी संगत में रहने से ख्वाजा हसन निज़ामी के दिल में शहजादों के प्रति हमदर्दी और स्नेह पैदा हुआ। उन्होंने इन उजड़े परिवारों से

1. भारत के सूफी संतों द्वारा ओढ़ी जाने वाली एक विशेष प्रकार की टोपी।

मिलकर उनके हालात पर कई किताबें लिखीं जो देशभर में बहुत लोकप्रिय हुईं। इनमें सबसे प्रसिद्ध पुस्तक 'बेगमात के आंसू' है, जिसमें सन् 1857 की क्रांति की सच्ची कहानियां हैं और उन्हीं में से कुछ चुनी हुई कहानियां इस संग्रह में प्रस्तुत हैं।

मुल्ला वाहदी का कथन है कि एक बार ख्वाजा हसन निज़ामी सख्त बीमार हो गए। उनकी माता ने उन्हें एक दरवेश के पास भेजा जो अंतिम मुगल सम्राट बहादुरशाह जफ़र के निकट के संबंधी थे। उन बुजुर्ग ने इनके गले में नादे अली का तावीज डलवा दिया। माताजी गर्व से बोलीं, "मेरे बच्चे के लिए हिंदोस्तान के बादशाह ने नादे अली का नक्श दिया है।" "बादशाह" शब्द पर माता के आंसू निकल आए। ख्वाजा साहिब ने पूछा, "अम्मा, आप रोती क्यों हैं?" उन्होंने उत्तर दिया, "बेटा अब वे बादशाह नहीं हैं। अंग्रेजों ने तख्त-ताज सब छीन लिए हैं।"

ख्वाजा साहिब कहते हैं कि इस घटना ने उनके मन में शहजादों के प्रति हमदर्दी का ऐसा बीज बोया कि जब सन् 1922 में मदीना-ए-मुनव्वरा गए तो उस वक्त भी उन्होंने उनके लिए विशेष रूप से प्रार्थना की और कहा, "ए दो जहान के सरदार, मैं दिल्ली के बरबाद शहजादों का नाता-ओ-बुका (चीख-पुकार) पेश करता हूं। वे तख्त-ताज के लिए नहीं रोते। उन्हें रूखी रोटी का टुकड़ा और तन ढांपने के लिए मोटा कपड़ा दरकार है। उनके अपमान और निरादर की हद हो चुकी है। अब खता पोश परवर्दिगार (गलतियों को छिपाने वाला पालनहार) से उन्हें माफी दिलवा दीजिए।"

सन् 1911 ही में दिल्ली दरबार हुआ। उसमें एक प्रोग्राम आलिमों और पंडितों के सलाम का भी था। सम्राट जार्ज पंचम अपनी महारानी के साथ लालकिले के झरोखे में बैठ गए और किले की दीवार के नीचे हिंदू और मुसलमान धार्मिक नेताओं ने एक साथ इकट्ठे होकर उन्हें आशीर्वाद दिया था। ख्वाजा हसन निज़ामी को भी बुलाया गया। वे घर पर लिहाफ ओढ़े लेटे रहे और उस समारोह में शामिल नहीं हुए। कहते थे, "मुझसे यह देखा नहीं जाएगा कि जहां शाहजहां और उनकी औलाद ने दर्शन दिए हों वहां जार्ज पंचम विराजमान हो। फिर लिहाफ का लुत्फ दरबारों से ज्यादा है।"

यह तो अंग्रेजों के जमाने की बात थी। आजादी के बाद लाल किले में पहला आम मुशायरा हुआ और पंडित कैफी से चलने के लिए कहा गया तो उन्होंने साफ इनकार कर दिया और कहलवा भेजा कि मुझसे किल-ए-मुअल्ला का यह अनादर नहीं देखा जाएगा।

ख्वाजा हसन निज़ामी की किताब 'बेगमात के आंसू' सबसे पहले 'गपरे-दिल्ली के अफसानों' के नाम से प्रकाशित हुई थी और कई बार जब्त हुई। इसके बाद इस पुस्तक के चौदह संस्करण निकल चुके हैं। इसके कुछ अंश रेडियो से प्रसारित भी हो चुके हैं।

सन् 1857 के विद्रोह में दिल्ली के शाही खानदान पर क्या गुजरी? इस दुखभरी और दर्दनाक कहानी को ख्वाजा हसन निज़ामी ने ऐसी संवेदनशील शैली में प्रस्तुत किया है कि पढ़ते-पढ़ते आंसुओं पर काबू पाना कठिन हो जाता है। गदर के बारे में इन चुनी हुई कहानियों का संग्रह अपने मौलिक नाम के साथ नेशनल बुक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित किया जा रहा है। आशा है कि स्वतंत्र भारत में यह पहले से भी ज्यादा दिलचस्पी के साथ पढ़ा जाएगा।

– ख्वाजा अहमद फारुक़ी

क्रम

भूमिका	पांच
कुलसूम ज़मानी बेगम	1
गुलबानो	8
शहजादी	12
नरगिस नज़र	20
मह जमाल	28
सकीना ख़ानम	37
सब्ज़पोश	44
बहादुर शाह ज़फ़र	47
मिर्ज़ा नसीर-उल-मुल्क	49
मिर्ज़ा दिलदार शाह	52
मिर्ज़ा क़मर सुल्तान	54

कुलसूम ज़मानी बेगम

यह एक बेचारी दरवेशनी की सच्ची विपदा है जो जमाने की गर्दिश से उन पर गुजरी। उनका नाम कुलसूम ज़मानी बेगम था। यह दिल्ली के अंतिम मुगल सम्राट अबु जफ़र बहादुर शाह की लाडली बेटी थीं।

कुछ साल हुए निधन हो गया। मैंने कई बार शहजादी साहिबा से खुद उनकी जबानी उनके हालात सुने हैं क्योंकि उनको हमारे हजूर निज़ामुद्दीन औलिया महबूबे अलाही (प्रभु के प्यारे) से खास अकीदत (श्रद्धा) थी। इसलिए अकसर हाज़िर होती थीं और मुझे दर्दनाक बातें सुनने का मौका मिलता था। नीचे जितनी भी घटनाएं दी गई हैं वे या तो खुद उन्होंने बयान की हैं या उनकी साहिबजादी ज़ीनत ज़मानी बेगम ने, जो अब तक जिंदा हैं और पंडित के कूचे में रहती हैं। ये घटनाएं इस प्रकार हैं।

जिस वक्त मेरे बाबाजान की बादशाहत खतम हुई और तख्त-ताज लुटने का वक्त नजदीक आया तो दिल्ली के लाल किला में कोहराम मचा हुआ था। चारों तरफ हसरत बरसती थी। सफेद-सफेद संगमरमर के मकान काले स्याह नज़र आते थे। तीन वक्त से किसी ने कुछ खाया न था। मेरी गोद में डेढ़ साल की बच्ची ज़ीनत दूध के लिए बिलखती थी। फिक्र और परेशानी के मारे न मेरे दूध रहा था न किसी अन्ना के। हम सब इसी उदासी में बैठे थे कि जिल्ले सुबहानी (मुगल दौर में राजा को इसी उपाधि से संबोधित किया जाता था) का खास ख्वाजा सरा हमको बुलाने आया। आधी रात का वक्त, सन्नाटे का आलम, गोलों की गरज से दिल सहमे जाते थे, लेकिन हुक्मे सुल्तानी (राजादेश) मिलते ही हम हाजिरी के लिए रवाना हो गए। हजूर मुसल्ले (नमाज पढ़ने की चटाई) पर तशरीफ रखते थे। तसबीह (जपमाला) हाथ में थी। जब मैं सामने पहुंची और झुककर तीन मुजरे

(बंदगी) बजा लाई तो हजूर ने बहुत प्यार से अपने पास बुलाया और फरमाने लगे, "कुलसूम, लो अब तुमको खुदा को सौंपा। किस्मत में हुआ तो फिर देख लेंगे। तुम अपने खाविंद (पति) को लेकर फौरन कहीं चली जाओ। मैं भी जाता हूं। जी तो नहीं चाहता कि इस आखिरी वक्त में तुम बच्चों को आंखों से ओझल होने दूं पर क्या करूं साथ रखने में तुम्हारी बरबादी का डर है। अलग रहोगी तो शायद खुदा कोई बेहतरी का सामान पैदा कर दे।"

इतना फरमाकर हजूर ने दस्ते मुबारक (कर कमल) दुआ के लिए, जो कंपन रोग के कारण कांप रहे थे, ऊपर उठाए और देर तक ऊंची आवाज में बारगाहे इलाही (अल्लाह का घर) में अर्ज करते रहे :

"खुदा वंद यह बेवारिस बच्चे तेरे हवाले करता हूं। ये महलों के रहने वाले जंगल वीरानों में जाते हैं। दुनिया में इनका कोई मददगार नहीं रहा। तेमूर के नाम की इज्जत रखियो और इन बेकस औरतों की इज्जत बचाइयो। परवर्दिगार (पालने वाला खुदा) यही नहीं बल्कि हिंदुस्तान के सब हिंदू-मुसलमान मेरी औलाद हैं और आजकल सब पर मुसीबत छाई हुई है। मेरे एमाल (कर्म) की शामत से इनको बेइज्जत न कर और सबको परेशानियों से निजात दे।"

इसके बाद मेरे सिर पर हाथ रखा। ज़ीनत को प्यार किया और मेरे खाविंद मिर्ज़ा ज्यायुद्दीन को कुछ जवाहरात देकर नूर महल साहिबा को हमराह कर दिया। जो हजूर की बेगम थीं।

पिछली रात को हमारा काफिला किले से निकला। इसमें दो मर्द और तीन औरतें थीं। मर्दों में एक मेरे खाविंद मिर्ज़ा ज्यायुद्दीन और दूसरे मिर्ज़ा उम्र सुल्तान, बादशाह के बहनोई थे। औरतों में एक मैं, दूसरी नवाब नूर महल और तीसरी हाफिज सुल्तान, बादशाह की समधन थीं। जिस वक्त हम रथ में सवार होने लगे तो तड़के का वक्त था। सब तारे छिप गए थे लेकिन सुबह का तारा झिलमिला रहा था हमने अपने भरे-पूरे घर पर और सुल्तानी महलों पर आखिरी नजर डाली तो दिल भर आया और आंसू उमड़ने लगे। नवाब नूर महल की आंखों में आंसू भरे हुए थे और सुबह के तारे का झिलमिलाना नूरमहल की आंखों में नजर आता था।

आखिर लाल किला से हमेशा के लिए जुदा होकर कोराली गांव में पहुंचे और वहां अपने रथवान के मकान पर रुके। बाजरे की रोटी और छाछ खाने को मिली। उस वक्त भूख में ये चीजें बिरियानी से भी ज्यादा मजेदार मालूम हुईं। एक दिन तो अमन से गुजर गया। लेकिन दूसरे दिन आस-पास के जाट और गूजर इकट्ठे होकर कोराली को लूटने चढ़ आए। सैकड़ों औरतें भी उनके साथ थीं जो

चुड़ैलों की तरह हम लोगों से चिमट गईं। तमाम जेवर और कपड़े इन लोगों ने उतार लिए। जिस वक्त ये सड़ी बसी औरतें अपने मोटे-मोटे, मैले-मैले हाथों से हमारे गले को नोचतीं थीं तो उनके लहंगों से ऐसी बू आती थी कि दम घुटने लगता था।

इस लूट के बाद हमारे पास इतना भी बाकी न रहा जिससे एक वक्त की रोटी जुट सके। हैरान थे कि देखिए अब और क्या पेश आएगा। ज़ीनत प्यास के मारे रो रही थी। सामने से एक जमींदार निकला। मैंने बेबस होकर आवाज दी, "भाई थोड़ा पानी इस बच्ची को ला दे।" जमींदार फौरन मिट्टी के एक बरतन में पानी लाया और बोला, "आज से तू मेरी बहन और मैं तेरा भाई।" यह जमीदार कोराला का खाता-पीता आदमी था। इसका नाम बस्ती था। उसने अपनी बैलगाड़ी तैयार करके हम सब को सवार किया और कहा कि जहां तुम चाहो पहुंचा दूंगा। हमने कहा, "अजारा, जिला मेरठ में मीर फ़ैज अली शाही हकीम रहते हैं। उनसे हमारे खानदान के बहुत अच्छे मरासम (संबंध) हैं। वहां ले चलो।" बस्ती हमें अजारा ले गया। मगर मीर फ़ैज अली ने ऐसा बुरा बर्ताव किया जिसकी कोई हद नहीं। साफ कानों पर हाथ रख लिए कि तुम लोगों को ठहराकर अपना घरबार तबाह करना नहीं चाहता। (मीर फ़ैज अली की औलाद ने यह किताब पढ़ी तो मुझसे कहा कि बेगम साहिबा का बयान ठीक नहीं। मीर फ़ैज अली ने उन सबको ठहराया था और मदद दी थी)।

वह वक्त बहुत मायूसी का था। एक तो यह डर कि पीछे से अंग्रेज फौज आती होगी। इस पर हमारी हालत इतनी खराब कि हर आदमी की निगाह फिरी हुई थी। वे लोग जो हमारी आंखों के इशारे पर चलते और हर वक्त देखते रहते थे कि हम जो कुछ हुक्म दें वह फौरन पूरा किया जाए वही आज हमारी सूरत नहीं देखना चाहते थे। शाबाश है बस्ती जमींदार को कि उसने मुंह बोली बहन का आखिर तक साथ निभाया। बेबस होकर अजारे से रवाना हुए और हैदराबाद की राह पकड़ी। औरतें बस्ती की गाड़ी में सवार थीं और मर्द पैदल चल रहे थे। तीसरे दिन एक नदी के किनारे पहुंचे जहां कोयल के नवाब की फौ़ज डेरा डाल कर पड़ी हुई थी। उन्होंने जब सुना कि हम शाही खानदान के आदमी हैं तो बहुत खातिर की और हाथी पर चढ़ाकर नदी के पार उतारा। अभी हम नदी के पार उतरे ही थे कि सामने से फौज आ गई और नवाब की फौज से लड़ाई होने लगी।

मेरे खाविंद मिर्ज़ा उम्र सुल्तान ने चाहा कि नवाब की फौज में शामिल होकर लड़ें मगर रिसालदार ने कहला भेजा कि आप औरतों को लेकर जल्दी चले जाएं।

हम जैसा मौका होगा देख लेंगे। सामने खेत थे जिनमें पकी हुई तैयार फसल खड़ी थी। हम लोग उसके अंदर छिप गए। जालिमों ने पता नहीं देख लिया था या अचानक ही गोली लगी। जो कुछ भी हो एक गोली खेत में आई जिससे आग भड़क उठी और सारा खेत जलने लगा। हम सब वहां से निकलकर भागे पर हाय, कैसी मुसीबत थी – हमको भागना भी नहीं आता था। घास में उलझ-उलझ कर गिरते थे। सिर की चादरें वहीं रह गईं। नंगे सिर होश उड़े हुए हजार दिक्कत से खेत से बाहर आए। मेरे और नवाब महल के पांव लहूलुहान हो गए। प्यास के मारे जबानें बाहर निकल आईं। ज़ीनत को गश (मूर्छा) पर गश आ रहे थे। मर्द हमको संभालते थे लेकिन हमारा संभलना मुश्किल था।

नवाब नूर महल तो खेत से निकलते ही चकरा कर गिर पड़ीं और बेहोश हो गईं। मैं ज़ीनत को छाती से लगाए अपने खाविंद का मुंह देख रही थी और दिल में कहती कि अल्लाह हम कहां जाएं। कहीं सहारा नजर नहीं आता। किस्मत ऐसी पलटी की शाही से फकीरी हो गई। लेकिन फकीरों को चैन और इत्मीनान होता है। यहां वह भी नसीब नहीं।

फौज लड़ती हुई दूर निकल गई थी। बस्ती नदी से पानी लाया। हमने पानी पीया और नवाब नूर महल के चेहरे पर पानी छिड़का। नूर महल रोने लगी और बोलीं कि अभी सपने में तुम्हारे बाबा हज़रत ज़िल्ले सुबहानी को देखा है। जंजीरों में जकड़े हुए हैं और कहते हैं ;

"आज हम गरीबों के लिए यह कांटों भरा खाक का बिछौना मखमली फर्श से बढ़कर है। नूर महल घबराना नहीं। हिम्मत से काम लेना। तकदीर में लिखा था कि बुढ़ापे में ये सख्तियां बर्दाश्त करो। जरा मेरी कुलसूम को दिखा दो। जेलखाने से पहले उसे देखना चाहता हूं।"

बादशाह की ये बातें सुनकर मेरे मुंह से हाय निकली और आंखें खुल गईं। कुलसूम, क्या सचमुच तुम्हारे बादशाह को जंजीरों में जकड़ा गया होगा? क्या वाकई वे कैदियों की तरह जेलखाने में भेजे गए होंगे। मिर्ज़ा उम्र सुल्तान ने इसका जवाब दिया कि यह महज वहम है। बादशाह लोग बादशाहों के साथ ऐसा बुरा सुलूक नहीं किया करते। तुम घबराओ नहीं। वे अच्छे हाल में होंगे। हाफिज मुलतान बादशाह की समधन बोली कि ये मुए फिरंगी बादशाहों की कद्र क्या खाक जानेंगे? वे खुद अपने बादशाह का सिर काटकर सोलह आने में बेचते हैं (सिक्के की तरफ इशारा है जिसमें बादशाह के सिर की मूर्ति होती है – हसन निज़ामी)। बुआ नूर महल, तुमने तो उन्हें जंजीर पहने देखा है। मैं कहती हूं इन बनिए बक्कालों

से तो इससे भी ज्यादा बदसुलूकी दूर नहीं है। लेकिन मेरे शौहर मिर्ज़ा ज्यायुद्दीन ने दिलासे की बात करके सबको मुतमयन (शांत) कर दिया।

इतने में बस्ती नाव में गाड़ी को इस पार ले आया और हम सवार होकर चल पड़े। थोड़ी दूर जाकर शाम हो गई और हमारी गाड़ी एक गांव में जाकर ठहरी। इस गांव में मुसलमान राजपूतों की आबादी थी। गांव के नंबरदार ने एक छप्पर हमारे लिए खाली करा लिया जिसमें सूखी घास और फूंस का बिछौना था। वे लोग इसी घास पर, जिसको प्याल या पुआल कहते थे, सोते हैं। हमको भी बड़ी खातिरदारी से (जो उनके ख़्याल में बड़ी खातिर थी) यह नर्म बिछौना दिया।

मेरा तो इस कूड़े से जी उलझने लगा। पर क्या करते उस वक्त और हो भी क्या सकता था। बेबस होकर इसी में पड़े रहे। दिन भर की तकलीफ और थकान के बाद इत्मीनान और बेफिक्री मिली थी, नींद आ गई।

आधी रात को अचानक हम सब की आंख खुल गई। घास के तिनके सुईयों की तरह बदन में चुभ रहे थे। और पिस्सू जगह-जगह काट रहे थे। उस वक्त की बेचैनी खुदा ही जानता है। मखमली तकियों, रेशमी नर्म-नर्म बिछौनों की आदत थी। इसलिए तकलीफ हुई वरना हम जैसे ही गांव के वे आदमी भी थे जो गहरी नींद में इसी घास पर पड़े सोते थे। अंधेरी रात में चारों तरफ से सियारों की आवाजें आ रही थीं और मेरा दिल सहमा जाता था। किस्मत को पलटते देर नहीं लगती। कौन कह सकता था कि एक दिन शहनशाहे-हिंद (भारत सम्राट) के बाल-बच्चे यूं खाक पर बसेरे लेते फिरेंगे। इसी तरह कदम-कदम पर तकदीर की गर्दिशों का तमाशा देखते हुए हैदराबाद पहुंचे और सीताराम पेठ में एक मकान किराए पर ले लिया। जबलपुर मे मेरे शौहर ने एक जड़ाऊ अंगूठी जो लूट खसूट से बच गई थी, बेच दी। इसी में रास्ते का खर्च चला और कुछ दिन यहां भी बसर हुए। आखिरकार जो कुछ पल्ले था, खत्म हो गया। अब फिक्र हुई कि पेट भरने का क्या वसीला किया जाए। मेरे शौहर ऊंचे दर्जे के खुशनवीस (लिपिक) थे। उन्होंने दरूद शरीफ ख़त रिहान में लिखा और चार मीनार पर हदिया करने ले गए (उन्होंने बेल बूटे बनाकर बहुत सुंदर ढंग से हजरत मुहम्मद और उनके परिवार के गुण लिखे और चार मीनार पर बेचने ले गए)। लोग उसे देखते थे और हैरानी से उनके मुंह खुले रह जाते थे। पहले दिन दरूद शरीफ की कीमत पांच रुपए पड़ी। इसके बाद यह होने लगा कि जो कुछ वे लिखते फौरन बिक जाता। इस तरह हमारा गुजारा बहुत अच्छी तरह होने लगा। लेकिन मूसा नदी की बाढ़ से डर कर शहर में दरोगा अहमद के मकान में उठ आए। यह आदमी हजूर निजाम का खास

मुलाजिम था। इसके बहुत से मकान किराए पर उठे हुए थे।

कुछ दिन बाद खबर उड़ी कि नवाब लशकर जंग, जिसने शहजादों को अपने पास संरक्षण दिया था। अंग्रेजों के कोप में आ गया है और अब कोई आदमी दिल्ली के शहजादों को पनाह नहीं देगा। बल्कि जिस किसी शहजादे की खबर मिलेगी उसके पकड़ने की कोशिश करेगा। हम सब इस खबर से घबरा गए और मैंने अपने शौहर को बाहर निकलने से रोक दिया कि कहीं कोई दुश्मन पकड़वा न दे। घर में बैठे-बैठे फाकों की नौबत आ गई तो लाचार एक नवाब के लड़के को कुरान शरीफ पढ़ाने की नौकरी मेरे शौहर ने बारह रुपए माहवार पर कर ली। वे चुपचाप उनके घर चले जाते थे और पढ़ा कर लौट आते थे मगर वह नवाब इतने बुरे व कटु स्वभाव के थे कि मेरे शौहर के साथ हमेशा मामूली नौकरों का सा बर्ताव करते थे जिसको वे बर्दाश्त न कर सकते थे और घर आकर रो-रोकर दुआ मांगते थे कि अल्लाह इस जिल्लत की नौकरी से मौत लाख दर्जे बढ़ कर है। तूने इतना मोहताज बना दिया। कभी तो उस नवाब जैसे लोग हमारे गुलाम थे और आज हम उसके गुलाम हैं। इसी बीच किसी ने मियां निज़ामुद्दीन साहिब को हमारी खबर कर दी। मियां की हैदराबाद में बहुत इज्जत थी क्योंकि मियां हजरत काले मियां साहिब चिश्ती निज़ामी फख़री के साहिबजादे थे जिनको दिल्ली के बादशाह और निज़ाम अपना पीर मानते थे। मियां रात के वक्त हमारे पास आए और हमको देखकर बहुत रोए। एक जमाना था कि जब वे किले में तशरीफ लाते थे तो सोने की कढ़ाई (बेल बूटों) वाली मनसद पर बिठाए जाते थे। बादशाह बेगम अपने हाथ से लौंडियों की तरह सेवा करती थीं। आज वे घर में आए तो टूटा फूटा बोरिया भी नहीं था जिस पर वे आराम से बैठते। पिछला जमाना आंखों में फिरने लगा। खुदा की खान, क्या था और क्या हो गया। मियां बहुत देर तक हालात पूछते रहे। इसके बाद तशरीफ ले गए। सवेरे उनका पैगाम आया कि हमने खर्च का इंतजाम कर दिया है। अब तुम हज का इरादा कर लो। यह सुनकर दिल खुश हो गया और मक्का मोआजमा की तैयारियां होने लगीं। अलकिस्सा (संक्षेप में) हैदराबाद से रवाना होकर बंबई आए और यहां अपने सच्चे हमदर्द और साथी बस्ती को खर्च देकर वापस भेज दिया। जहाज में सवार हुए तो जो मुसाफिर यह सुनता था कि हम हिंदुस्तान के बादशाह के खानदान से हैं तो हमें देखने के लिए उतावला हो उठता था। उस वक्त हम सब दरवेशों के रंग के लिबास में थे। एक हिंदू ने, जिसकी शायद अदन में दुकान थी और जो हमारे हाल से बेखबर था, पूछा कि तुम लोग किस पंथ के फकीर हो। उसके सवाल ने जख्मी दिल पर नमक

छिड़क दिया। मैं बोली, "हम मजलूम (पीड़ित) शाह गुरु के चेले हैं। वही हमारा बाप था वही हमारा गुरु। पापी लोगों ने उसका घरबार सब छीन लिया और हमको उससे जुदा करके जंगलों में निकाल दिया। वे हमारी सूरत को तरसते हैं और हम उनके दर्शनों के बगैर बेचैन हैं।

इससे ज्यादा और क्या अपनी फकीरी की हालत बयान करें। जब उसने हमारी असली कैफियत लोगों से सुनी तो बेचारा रोने लगा और बोला कि बहादुर शाह हम सबका बाप और गुरु था। क्या करें, रामजी की यही मर्जी थी कि वह बेगुनाह बरबाद हो।

मक्का पहुंचे तो अल्लाह मियां ने ठहरने का एक अजीब ठिकाना पैदा कर दिया। अब्दुल कादिर नामी मेरा एक गुलाम था जिसको मैंने आजाद करके मक्के भेज दिया था। यहां आकर उसने बहुत दौलत कमाई और ज़मज़म (मक्के में एक जलस्रोत, जिसका जल पवित्र माना जाता है) का दरोगा हो गया। उसको हमारे आने की खबर मिली तो दौड़ा हुआ आया और कदमों में गिर कर बहुत रोया। उसका मकान बहुत अच्छा और आरामदेह था। हम सब वहीं ठहरे। कुछ दिनों के बाद सुल्तान रोम के नायब (उप) को जो मक्के में रहता था, हमारी खबर हुई तो वह भी हमसे मिलने आया। किसी ने उससे कहा कि दिल्ली के बादशाह की लड़की आई है। बेहजाबाना (पर्दे के बिना) बातें करती है। नायब सुल्तान ने अब्दुल कादिर के जरिए मुलाकात का पैगाम दिया जो मैंने मंजूर कर लिया।

दूसरे दिन वह हमारे घर पर आया और बहुत अदब और सलीके से बातचीत की। आखिर में उसने ख्वाहिश की कि वह हमारे आने की खबर हजूर सुल्तान को देना चाहता है। मैंने इसका जवाब बहुत बेपरवाही से दिया कि अब हम एक बहुत बड़े सुल्तान के दरबार में आ गए हैं। अब हमें किसी दूसरे सुल्तान की परवाह नहीं है। नायब ने हमारे खर्च के लिए अच्छी खासी रकम मंजूर कर दी और हम नौ वर्ष वहीं रहे। इसके बाद एक साल बगदाद शरीफ व एक-एक साल नजफ अशरफ व करबला में गुजारा। आखिर इतनी मुद्दत के बाद दिल्ली की याद ने बेचैन किया और वापस दिल्ली आ गए। यहां अंग्रेजों की सरकार ने बहुत तरस खाने के बाद दस रुपए माहवार पेंशन मंजूर कर दी। इस पेंशन की रकम को सुन कर पहले तो मुझे हंसी आई कि मेरे बाप का इतना बड़ा मुल्क लेकर दस रुपए मुआवजा देते हैं। लेकिन फिर ख्याल आया कि मुल्क तो खुदा का है किसी के बाबा का नहीं है, वह जिसको चाहता है दे देता है। जिससे चाहता है, छीन लेता है। इंसान की तो दम मारने की हिम्मत नहीं है।

गुलबानो

गुलबानो, खुदा रखे, पंद्रह साल की हुई। जवानी की रातों ने गोद में लेना शुरू किया। मुरादों के दिन पहलू में गुदगुदियां करने लगे। मिर्ज़ा दाराबख्त बहादुर साबिक़ वलीअहद (भूतपूर्व युवराज) बहादुरशाह के बेटे हैं। बाप ने बड़े चाव चौंचले से पाला है और जिस दिन से वे दुनिया को छोड़कर कब्र में गए हैं, महल में गुलबानो की नाजबरदारी पहले से भी ज्यादा होने लगी है। अम्मा कहती है कि निगोड़ी के नन्हें से दिल को बहुत दुःख पहुंचा है। बाप का हड़का न लगे। इसकी ऐसी दिलदारी करो कि उनके प्यार को भूल जाए।

इधर दादा यानी बहादुर शाह बादशाह का यह हाल है कि पोती के लाड़ में किसी बात से पीछे नहीं हटते। नवाब ज़ीनत महल उनकी लाड़ली और मंजूरेनजर बीवी है। जवांबख्त उन्हीं के पेट का शहजादा है। यद्यपि मिर्ज़ा दाराबख्त के वक्त से पहले मर जाने से वलीअहद का मनसब (पद) मिर्ज़ा फख़रु को मिला है। लेकिन जवांबख्त की मुहम्मद के सामने वलीअहद की नहीं चलती है। और ज़ीनत महल अंग्रेजों से ही अंदर से अंदर जवांबख्त की तख्तनशीनी के मामले तय कर रही हैं। जवांबख्त की इस धूम से शादी हुई है कि मुगलों की तारीख के आखिरी दौर में उसकी शान-शौकत की मिसाल नहीं मिलती। गालिब और ज़ौक़ सेहरे लिखते हैं और उनमें शेरबाजी की वह मशहूर चशमक हो जाती है जिसका जिक्र शमसुलउलेमा आज़ाद देहलवी ने अपनी किताब 'आबेहयात' में किया है और गालिब को लिखना पड़ता है कि 'मकता में आप पड़ी थी सुखने मुस्तरानाबात' वरना मुझे खुदा नखासता उस्तादे शाह यानी ज़ौक से कुछ अदावत नहीं है। (कविता के पहले छंद में कुछ अपमानजनक बात कही गई थी वैसे उस्ताद जौक़ से कोई दुश्मनी नहीं है।)

यह सब कुछ था और जवांबख्त और ज़ीनत महल के आगे किसी का चिराग

न जलता था। लेकिन गुलबानो की बात सबसे निराली थी। बहादुरशाह को इस लड़की से जो प्यार था और जैसी सच्ची मुहब्बत इस अनाथ लड़की से रखते थे वैसा प्यार ज़ीनत महल और जवांबख्त को भी नहीं मिलता था। बस अंदाज हो सकता है कि गुलबानो किस शान-शौकत से जिंदगी बसर करती होगी। मिर्ज़ा दाराबख्त के और भी बाल-बच्चे थे लेकिन गुलबानो और उसकी मां से उनको बहुत प्रेम था।

गुलबानो की मां एक डोमनी थी और मिर्ज़ा उसको अपनी दूसरी बेगमात से ज्यादा चाहते थे। जब वे मरे तो गुलबानो 12 साल की थी। मिर्ज़ा दरगाह हज़रत मख़दूम नसीरुद्दीन चिराग दिल्ली में दफन हुए थे जो दिल्ली से 6 मील दूर पुरानी दिल्ली के खंडहरों में है। गुलबानो महीने के महीने मां को लेकर बाप की कब्र देखने जाया करती थी। जब जाती तो कब्र से लिपट कर रोती और कहती, "अब्बा हमको भी अपने पास लिटाकर सुलालो। हमारा जी तुम बिन घबराता है।"

जब गुलबानो ने पंद्रहवें साल में कदम रखा तो जवानी ने बचपन की जिद और शरारतें तो भुला दीं लेकिन शोखियां इतनी ज्यादा पैदा कीं कि महल का बच्चा-बच्चा उससे पनाह मांगता था। सोने के छप्परखट में दोशाला ताने सोया करती थी। शाम हुई और चिराग जले और बानो छप्परखट में पहुंची। मां कहती, "चिराग में बत्ती पड़ी, लाडो पलंग चढ़ी" तो वह मुस्कराकर अंगड़ाई और जम्हाई लेकर सिर के बिखरे हुए बालों को समेटकर कहती "अच्छा बी, तुमको क्या? सोते हैं, वक्त खोते हैं – तुम्हारा क्या लेते हैं। तुम बे-वजह कोयलों पर लेटी जाती हो।" मां कहती "बानो, मैं जलती नहीं। शौक से आराम करो। खुदा तुमको हमेशा सुख की नींद सुलाए रखे। मैं तो यह कहती हूं कि ज्यादा सोना आदमी को बीमार कर देता है। तुम शाम को सोती हो तो सवेरे जल्दी उठा करो। लेकिन तुम्हारा तो यह हाल है कि दस बज जाते हैं, घर में धूप फैल जाती है और लौंडियां डर के मारे बात तक नहीं कर सकतीं कि बानो की आंख खुल जाएगी। ऐसा भी क्या सोना। आदमी को कुछ घर का काम भी देखना चाहिए। अब माशा अल्लाह, तुम जवान हुई। पराये घर जाना है। अगर यही आदत रही तो वहां क्यों कर गुजारा होगा।"

गुलबानो मां की यह तकरीर सुनकर बिगड़ती और कहती, "तुमको इन बातों के सिवा कुछ और भी आता है? हमसे न बोला करो। तुम्हें हम दूभर हो गए हैं तो साफ-साफ कह दो। हम दादा हजरत (बहादुर शाह) के पास जा रहेंगे।"

उसी जमाने का जिक्र है कि मिर्ज़ा दावर शिकोह शहजादा ख़िरज़ सुल्तान का बेटा गुलबानो के पास आने-जाने लगा। किले में आपस में पर्दा करने का रिवाज

नहीं था। शाही खानदान के लोग आपस में पर्दा नहीं करते थे। इसलिए बेरोकटोक मिर्ज़ा दावर का आना-जाना होता था।

पहले तो गुलबानो उनकी बहन और वे उनके भाई थे। चाचा ताया के दो बच्चे समझे जाते थे। लेकिन बाद में प्यार ने एक और रिश्ता पैदा किया। मिर्ज़ा गुलबानो को कुछ और समझते थे और गुलबानो दावर को बाहरी रिश्ते के अलावा किसी और नजर से भी देखती थीं।

एक दिन सुबह के वक्त मिर्ज़ा गुलबानो के पास आए तो देखा कि बानो काला दोशाला ओढ़े सुनहरी छप्परखट में फूलों की सेज पर पांव फैलाए बेखबर सोई है। मुंह खुला हुआ है। अपने ही बाजू पर सिर रखा है। तकिया अलग पड़ा है। दो लौंडियां मक्खियां उड़ा रही हैं।

दावर शिकोह चाची के पास बैठकर बातें करने लगा लेकिन कनखियों से गुलबानो की बेसुध हालत भी देखता जाता था। आखिर न रहा गया तो बोला, "क्यों चाची, हज़रत बानो इतने दिन चढ़े तक सोई रहती हैं? धूप सिर पर आ गई है। अब इनको जगा देना चाहिए।" चाची ने कहा, "बेटा बानो के मिजाज को जानते हो। किसकी शामत आई है जो इनको जगाए। तूफान उठा देंगी।" दावर ने कहा, "देखिए, मैं जगाता हूं। देखें क्या करती हैं।" चाची हंसकर बोली, "जगा दो तुम से क्या कहेंगी। तुम्हारा बहुत लिहाज करती है।" दावर ने जाकर तलवे में गुदगुदी की। बानो ने अंगड़ाई लेकर पांव समेट लिया और अचानक आंखें खोलकर गुस्से से पांयत की ओर देखा। उसको ख्याल था कि लौंडी की शरारत है। उसको गुस्ताख़ी की सजा देनी चाहिए। पर जब उसने ऐसे शख्स को सामने खड़ा देखा जिसकी मुहब्बत से उसका अपना दिल भरा हुआ था तो शर्म से दोशाले का आंचल मुंह पर डाल लिया और घबराकर उठ बैठी। दावर ने होश उड़ा देने वाले इस दृश्य को दिल थाम कर देखा और चीखकर बोला, "लो चिची हज़रत, मैंने बानो को उठा दिया।"

मुहब्बत ने बहुत तरक्की की। जब प्यार की पींगें बढ़ने लगीं और विरह से नींद हराम होने लगी तो गुलबानो की मां को शक हुआ और उसने दावर शीकोह का अपने घर में आना बंद कर दिया।

दरगाह हजरत चिरागदिल्ली के एक कोने में अच्छी-खासी सूरत वाली औरत फटा हुआ कंबल ओढ़े रात के वक्त हाय-हाय कर रही थी। सर्दी की बारिश धुआंधार हो रही थी। तेज हवा के झोंकों से बौछार उस जगह को गीली कर रही थीं जहां उस औरत का बिस्तर था।

यह औरत बहुत बीमार थी। पसली के दर्द, बुखार और बेकसी में अकेली पड़ी तड़पती थी। बुखार की बेहोशी में उसने आवाज दी, "गुलबदन, ओ गुलबदन, मुरदार कहां मर गई। जल्दी आ और मुझको दोशाला ओढ़ा दे। देखो बुछाड़ अंदर आ रही है। पर्दा छोड़ दे,। रोशन, तू ही आ। गुलबदन तो कहीं गायब हो गई है। मेरे पास कोयलों की अंगीठी ला, पसली पर तेल मल। अरे, दर्द से मेरी सांस रुकी जाती है।"

जब कोई इस आवाज पर भी उसके पास नहीं आया तो उसने कंबल चेहरे से हटा कर चारों तरफ देखा। अंधेरे दालान में ख़ाक के बिछौने पर अकेली पड़ी थीं। चारों तरफ घोर अंधेरा छाया हुआ था। बारिश हो रही थी। बिजली चमकती थी तो एक सफेद कब्र की झलक दिखाई देती थी जो उसके बाप की थी।

यह हालत देखकर उस औरत ने चीख मारी और कहा, "बाबा, मैं तुम्हारी गुलबानो हूं। देखो, अकेली हूं। उठो, मुझे बुखार चढ़ रहा है। मेरी पसली में जोरों का दर्द हो रहा है। मुझे सर्दी लग रही है। मेरे पास इस फटे कंबल के सिवा ओढ़ने के लिए कुछ नहीं है। मेरी अम्मा मुझसे बिछुड़ गई है। मैं महलों से निकाल दी गई हूं। बाबा, अपनी कब्र में मुझको बुला लो। मुझे डर लगता है। कफन से मुंह निकालो और मुझको देखो। मैंने परसों से कुछ नहीं खाया। मेरे बदन में गीली जमीन के कंकर चुभते हैं। मैं ईंट पर सिर रखे लेटी हूं।

"मेरा छप्परखट क्या हुआ? मेरा दोशाला कहां गया? मेरी सेज किधर गई? अब्बा-अब्बा, उठो जी, कब तक सोएंगे? हाय दर्द! उफ! कैसे सांस लूं।"

यह कहते-कहते वह बेहोश-सी हो गई और उसने देखा कि वह मर गई है और उसके वालिद मिर्ज़ा दाराबख्त उसको कब्र में उतार रहे हैं और रो-रो कर कहते हैं, "यह इस बेचारी का खारी (मिट्टी) का छप्परखट है।"

आंख खुल गई और बेचारी बानो एड़ियां रगड़ने लगी। मरने का वक्त सिर पर था और वह कहती थी, "लो साहिब, अब मैं मरती हूं। कौन मेरे गले में शरबत टपकाएगा? कौन मुझको मेरे आखिरी वक्त में यासीन (कुरान-शरीफ का एक अंश) सुनाएगा। कौन अपनी गोद में मेरा सिर रखेगा? अल्लाह, तेरे सिवा मेरा कोई नहीं। तू एक है। तेरा हबीब (हजरत मोहम्मद साहिब) ही मेरे साथी और देखरेख करने वाले हैं और यह चिरागे औलिया मेरे पड़ोसी।"

शहजादी मर गई और दूसरे दिन गरीबों के कब्रिस्तान में गड़ गई और वही उसका अबदी (अनंत काल तक) छप्परखट था जिसमें वह कयामत तक सोती रहेगी।

शहजादी

इस घर की कच्ची दीवारें थीं जिनका एक हिस्सा बरसात में गिर कर खराब हो गया था। दरवाजे पर टाट का फटा हुआ पर्दा लटका था। मैंने आवाज दी तो बूढ़ी मुलाजिमा बाहर आई और शहजादी साहिबा ने मुझे अंदर बुला लिया।

इस मकान का आंगन बहुत छोटा है। दो चारपाइयां मुश्किल से आती होंगी। दालान भी इतना छोटा कि दो चारपाइयां भी समा नहीं सकतीं। दालान के उत्तर में एक छोटी सी कोठरी भी है।

जब मैं अंदर गया तो शहजादी साहिबा बोरिए पर बैठी थीं। दालान में एक तरफ चारपाई पड़ी हुई थी उसके सामने एक बोरिया बिछा हुआ था। इसी पर बैठी हुई शहजादी साहिबा पनकुट्टी में अपना पान कूट रही थीं। बोरिया बहुत पुराना था और जगह-जगह से फटा हुआ था। पैबंद लगी हुई एक सफेद चादर भी बिछी हुई थी। तकिया छोटा था और थोड़ा मैला भी। शहजादी के सामने मिट्टी की एक बधनी (लोटा) रखी थी जिसमें राख भरी हुई थी। शहजादी साहिबा इससे उगालदान का काम लेती थीं। उनके दाईं ओर पटारी रखी थी। पटारी की कलई खराब हो चुकी थी लेकिन फिर भी उस पर पान के धब्बे नहीं थे। दालान की कड़ियां बहुत पुरानी थीं। गिलहरियों और चूहों ने तख्तों को खराब कर रखा था।

शहजादी साहिबा का सिर बिल्कुल सफेद है। पलकें और भौहें भी सफेद हो गई हैं। जवानी में उनका कद लंबा होगा। इसलिए अब बहुत झुक गई हैं। उनके कपड़े साफ सुथरे थे लेकिन हर कपड़े में कई-कई जगह पैबंद लगे हुए थे। उनकी आवाज बहुत साफ और मजबूत है। बोल-चाल बहुत मीठी, प्रभावशाली तथा खालिस उर्दू में होती है। वे बहुत गंभीरता और आत्मविश्वास के साथ बात करती हैं। उनके चेहरे पर झुर्रियां बहुत ज्यादा हैं। और शरीर भी बहुत कमजोर है।

उनके सामने जाकर मैंने अभिवादन किया तो बोलीं, "जीते रहो। मियां जब से आंखें खराब हुई हैं दरगाह शरीफ में हाजिर नहीं हो सकी। तुमको कभी देखा नहीं लेकिन मुद्दत से नाम सुनती आई हूं। जब बड़ी बी ने नाम लिया कि ख्वाजा साहिब आए हैं और मिलना चाहते हैं तो मैं बहुत खुश हुई कि जिनका नाम सुनती थी वे खुद मेरे घर आ गए। उनसे हमारे बुजुर्गों को बड़ी श्रद्धा थी और मैं हमेशा सतरहवीं की उम्र में जाया करती थी। अब आंखें जाती रहीं, हाथ पांव चलने से रहे — बताइए क्यों कर आना हुआ?"

मैंने कहा, "आने की वजह अभी बताऊंगा। लेकिन पहले यह बताइए कि आपको इस मकान में कुछ तकलीफ तो नहीं होती। यह तो बहुत ही छोटा मकान है और छत में भी जगह-जगह सुराख हैं। मिट्टी झड़ती होगी।" वह बोली, "अरे मियां! तुमने फिक्र किया। जब तकदीर ने किला और महल छिनवा दिए तो अब जो कुछ भी मिल जाए सो भला है। डेढ़ रुपए महीना किराए का मकान इससे अच्छा और क्या होगा? छत से मिट्टी झड़ती है और कोई रात ऐसी नहीं आती कि दो चार बार पलंग की चादर साफ न करनी पड़े। एक वक्त था कि लाल किले के अंदर अपने महल में सोती थी। छत में किसी चिड़िया ने घोंसला बना लिया था। उसके कुछ तिनके मेरे बिस्तर पर गिर पड़े तो रात भर नींद नहीं आई। एक यह वक्त है कि रात भर मिट्टी झड़ती है और इस तकलीफ को सहना पड़ता है।

मैंने पूछा, "सरकार से कुछ पेंशन मिलती है?" उन्होंने उत्तर दिया "जी हां, दस रुपए महीना मुद्दत से मिल रहा है। मैंने कहा, "कुछ और आमदनी भी है।" वे बोलीं, "जी हां, एक मकान है जिसका किराया सात रुपए महीना आता है। मैं पहले उसमें रहती थी। मगर जब से आंखें गई तो दस रुपए महीना में गुजारा नहीं हो सका। इसलिए वह मकान किराए पर दे दिया और खुद कम किराए के मकान में आ गई। अब हम दो आदमी हैं। एक ये बड़ी बी हैं, एक मैं हूं। मकान का किराया और खाने कपड़े का हम दोनों का गुजारा 17 रुपए में पान-छालिया का भी खर्च है और नजर न्याज का भी।" मैंने कहा, "मैं यह चाहता हूं कि आप अपने हालात मुझे बताएं ताकि मैं उनको किताब में लिखूं क्योंकि मैंने आपके खानदान के बहुत से मर्दों और औरतों के हालात लिखे हैं।"

यह बात सुनते ही शहजादी साहिबा ने पान कूटना छोड़ दिया और मेरी ओर देखने लगीं और कहा, "न मियां, मुझको यह मंजूर नहीं कि मेरा नाम घर-घर, गली-गली और कूचा-कूचा उछलता फिरे।" मैंने कहा, "मैं आपका नाम नहीं लिखूंगा। सिर्फ हालात छापूंगा।" उन्होंने उत्तर दिया "वे हालात ही क्या हैं? —

सिर्फ दो ही बातें हैं – हम बादशाह थे और अब हम फकीर हो गए। इससे ज्यादा पूछो तो यह जवाब है कि अब हम मर भी जाएंगे।"

मैंने कहा, "तो अपने हालात बतला दीजिए। मैं नाम और पता नहीं लिखूंगा।" शहजादी साहिबा को इतना गुस्सा आ गया था कि वे बहुत देर चुप बैठी रहीं और पानदान अपने नजदीक सरकाकर मेरे लिए एक पान का टुकड़ा बनाया और ठंडी सांस लेकर बोलीं, "मियां, गदर में मेरी उम्र 10-11 साल की थी। हम किले के अंदर रहते थे। बादशाह सलामत हमारे खानदान से कुछ नाराज थे। लेकिन हमारी तनख्वाह महीने की महीने मिल जाती थी। मेरे तीन भाई थे और बहन सिर्फ एक मैं थी। वालिद ने आखिरी उम्र में एक और शादी कर ली थी। हालांकि मेरी अम्मा भी जिंदा थीं। इस बुढ़ापे की शादी की वजह से मेरी अम्मा और उसकी सौतन में भी लड़ाई झगड़ा रहता था और हम तीनों बहन-भाई भी सौतेली अम्मा से लड़ते और झगड़ते रहते थे। मगर मुझसे सौतेली मां बहुत प्यार करती थी। मैं सगी मां और सौतेली मां दोनों की लाड़ली बेटी कहलाती थी। हमारे घर में कई औरतें और कई मर्द खिदमत के लिए नौकर थे। गदर से छह महीने पहले मेरी सौतेली अम्मा को हैजा हुआ वे मर गईं। मेरे दो भाई भी उन्हीं दिनों में हैजे से मर गए। और जब गदर हुआ तो हम सिर्फ दो भाई बहन और एक अब्बा हजरत और एक अम्मा मौजूद थे।

बादशाह सलामत किले से निकल कर हुमायूं के मकबरे में चले गए। और भी बाकी सब किले में रहने वाले बाहर निकल गए और किला खाली हो गया। लेकिन हमारा मकान किले की इमारतों से कुछ अलग था और बहुत मजबूत था। इसलिए अब्बा हजरत राजी नहीं हुए और उन्होंने कहा – बाहर जाएंगे तो वहां भी मरेंगे और बाहर का मरना बहुत बुरा होगा। इसलिए यहीं घर में रहो। जो खुदा को मंजूर होगा। इसी घर में हो जाएगा।

बादशाह सलामत के जाने के बाद दो दिन तक हमारे घर में कोई नहीं आया। बाहर के नौकर और घर की मांमाएं सब भाग गए थे। हमने घर के दरवाजे बंद कर लिए थे। ड्योढ़ी में तीन-चार दरवाजे थे, मोटी-मोटी कुंडियां और भारी-भारी किवाड़ लगे हुए थे। तीसरे दिन मकान के बाहर घोड़ों की टापों और बहुत से आदमियों के बोलने की आवाजें आईं और किसी के दरवाजे तोड़ने शुरू किए। मेरे भाई की उम्र सोलह वर्ष की थी। अब्बा हजरत और अम्मा हजरत ने फौरन वजु (नमाज पढ़ने से पहले हाथ-मुंह धोना) किया और भाई से कहा – मियां उठो तुम भी वजु करो। मरने का वक्त आ गया। यह बात सुनकर मेरा दिल दहल गया

और मैं अम्मा हजरत से जाकर लिपट गई। वे रोने लगीं और मुझको प्यार किया। और कहा, 'घबराओ नहीं। अल्लाह मददगार है। शायद वे कोई बचने की सूरत निकाल दे', इसके बाद उन सबने वजु किया और फौरन हम सबने मुसल्ले बिछाकर और सजदे में सिर झुकाकर अल्लाह मियां से दुआएं मांगनी शुरू कर दीं। दरवाजे तोड़ने की आवाजें बराबर आ रही थीं। हम सब सजदे में ही थे कि दस बारह गोरे और दस बारह सिख संगीन चढ़ी हुई बंदूकें लिए हुए घर के अंदर आ गए। अब्बा हजरत और भाई सजदे से फौरन खड़े हो गए। अब्बा हजरत ने मुझको गोद में लेकर चादर से मुंह छिपा लिया। एक सिख ने अब्बा हजरत से पूछा, 'तुम कौन हो और यहां क्यों बैठे हो?' अब्बा हजरत ने जवाब दिया, 'यह मेरा घर है और मैं इसी में रहता हूं। शाह आलम बादशाह की औलाद हूं।' इस सिख ने अंग्रेज अफसर को यह बात समझाई। अंग्रेज अफसर ने टूटी-फूटी उर्दू में कुछ कहा जिसको मैं नहीं समझी तो फिर उस सिख ने अब्बा हजरत को समझाया कि साहिब कहते हैं कि बादशाह भाग गए। और सब लोग भाग गए। तुम क्यों नहीं भागे। अब्बा हजरत ने कहा कि बादशाह हमसे कुछ नाराज थे इसलिए न वे हमें अपने साथ ले गए न ही हम उनके साथ गए। और हमने सिपाहियों के बलवे में हिस्सा नहीं लिया। और हमें यकीन था कि अंग्रेज सरकार बेगुनाह आदमियों को नहीं सताती। हम बेगुनाह थे। इसलिए हम नहीं भागे। अंग्रेज अफसर ने कहा कि तुमको पहाड़ी पर चलना होगा। हम छानबीन करेंगे। अगर तुम बेगुनाह हुए तो तुम्हारी जान को कोई खतरा नहीं होगा। अब्बा हजरत ने कहा कि मेरे साथ मेरी बीवी है और एक छोटी बच्ची है और यहां कोई सवारी नहीं है और इन औरतों को पैदल चलने की आदत नहीं है। अंग्रेज अफसर ने जवाब दिया कि इस लड़ाई के वक्त हम तुम्हारे लिए सवारी का इंतजाम नहीं कर सकते। अगर यहां ठहरे रहोगे तो डर है कि दूसरे सिपाही यहां आएंगे और बेखबरी में तुमको मार डालेंगे। इसलिए तुमको जल्दी रवाना हो जाना चाहिए। हम तुम्हारे साथ दो सिपाही कर देंगे। अगर रास्ते में कोई सवारी मिल जाएगी तो तुम्हारी औरत और लड़की उसमें बैठ जाएंगी। नहीं तो इन सब को पैदल चलना होगा।

अब्बा हजरत मजबूर हो गए और चलने की तैयारी करने लगे। उन्होंने कुछ कीमती गहने और जवाहरात अपने साथ लिए और बाकी सारा सामान घर में छोड़ दिया और फौज वालों के साथ घर से बाहर निकले। अम्मा हजरत हमेशा बीमार रहती थीं। मुझको भाई ने गोद में उठा लिया। अब्बा हजरत ने अम्मा का हाथ पकड़ लिया और हमने अपने भरे घर को हसरत के साथ एक नजर उठा कर देखा

कि फिर हम कभी यहां नहीं आएंगे। और ऐसा ही हुआ कि हम फिर कभी वहां नहीं गए।

जब हम घर से बाहर निकले तो वे अंग्रेज और सिख फौजी घोड़ों पर सवार हो गए और दो सिख सवारों को हमारे साथ पहाड़ी की तरफ भेज दिया। और वे किसी तरफ घोड़े दौड़ाकर चल गए। किले के दरवाजे तक तो वे सवार आहिस्ता-आहिस्ता चलते रहे और उन्होंने अब्बा हजरत और अम्मा हजरत से कुछ नहीं कहा। क्योंकि अम्मा हजरत से चला न जाता था और वे हर दस कदम के बाद बैठ जाती थीं और उनका बदन कांप रहा था। जब अम्मा हजरत बैठ जाती तों वे सवार भी रुक जाते। लेकिन जब हम किले के दरवाजे के बाहर पहुंच गए तो उन सवारों ने सख्ती शुरू की और कहा कि इस तरह तो शाम हो जाएगी। तुम जल्दी-जल्दी क्यों नहीं चलते? अब्बा हजरत ने नर्मी से जवाब दिया कि भाई तुम देख रहे हो कि मेरे साथ एक बीमार और कमजोर औरत है जो सारी उम्र कभी पैदल नहीं चली। हम शरारत और सरकशी से ऐसा नहीं कर रहे हैं। औरत और बच्चे की वजह से मजबूर हैं। सवार यह सुनकर चुप हो गए। मगर मेरे भाई के मुंह से अचानक यह बात निकली कि तुम हमारे मुल्क के हो। तुमको रहम नहीं आता? इस पर एक सिख ने कहा कि हम क्या करें, हाकिम का हुक्म है। भाई ने कहा कि हाकिम ने यह नहीं कहा कि हम पर इतनी सख्ती करना। सिख सवार ने जवाब दिया कि हमने कौन सी सख्ती की है? लेकिन अब सख्ती करनी पड़ेगी क्योंकि तुम लोग जानबूझ कर चलने में देर लगा रहे हो। यह कहकर एक सवार हमारे पीछे आ गया और एक आगे हो गया। अम्मा हजरत घोड़े को अपने पीछे देखकर घबरा गईं। उनको इखतलाज (दौरे) की बीमारी थी और उन्हें एकदम दौरा पड़ गया। वे निढाल होकर गिर पड़ीं और हाय-हाय करने लगीं। सिख सवार यह हालत चुपचाप खड़ा देखता रहा और कुछ देर बाद उसने अब्बा हजरत से कहा कि मैं पैदल चलता हूं और इस बीमार औरत को लेकर घोड़े पर सवार हो जाओ। आखिर अब्बा हजरत ने अम्मा हजरत को गोद में उठा लिया और घोड़े पर सवार होकर चले। और वह बेचारा सिख सवार पहाड़ी तक पैदल गया और मैं भाई की गोद में पहाड़ी पर पहुंची। पहाड़ी पर अंग्रेज फौज चारों तरफ ठहरी हुई थी। हमको भी एक तरफ तंबू में ठहरा दिया गया और उन सिख सवारों ने फौजी लंगर से रोटी लाकर दी। वह रात हमने उसी तंबू में गुजारी।

दूसरे दिन सवेरे फौज के जरनैल ने हम सबको अपने सामने बुलाया। दिल्ली का कोई जासूस उस अंग्रेज के पास खड़ा था। उससे पूछा कि तुम इनको जानते

हो? उसने कहा – हां मैं जानता हूं। ये बादशाह के खानदान से हैं और जब लालकिले के अंदर अंग्रेज मर्दों, औरतों और बच्चों को कत्ल किया गया तो इस आदमी ने उनके कत्ल कराने में बड़ा हिस्सा लिया था। यह सुनकर जरनैल ने अब्बा हज़रत की तरफ बहुत गुस्से की नजर से देखा। अब्बा हजरत ने जवाब दिया कि यह आदमी झूठ कहता है। यह पहले मेरे पास नौकर था। चोरी करने पर मैंने इसको एक बार बहुत पिटवाया था और नौकरी से निकाल दिया था। इसलिए दुश्मनी से यह ऐसा कहता है। आप इससे इतना पूछिए कि बहादुरशाह बादशाह कितने साल से मुझसे नाराज थे और मेरा सलाम कितनी देर से बंद था। जासूस ने जवाब दिया कि यह ठीक है कि मैं इनके यहां नौकर था मगर यह गलत है कि मुझे चोरी करने पर इन्होंने पिटवाया था। मैंने अपने आप ही इनकी नौकरी छोड़ दी थी क्योंकि यह तनख्वाह कम देते थे। और यह भी ठीक है कि बादशाह इनसे नाराज थे। लेकिन जब गदर हुआ तो इन्होंने बादशाह को खुश करने के लिए उनके पास जाना-आना शुरू किया और जिस दिन अंग्रेज कत्ल किए गए तो ये और इनका लड़का बहुत कोशिश कर रहे थे और उन लोगों पर नाराज हो रहे थे जो अंग्रेज बच्चों और औरतों के कत्ल के खिलाफ थे। यह कहते थे कि यह बात इस्लामी तालीम के खिलाफ है। उस वक्त इन दोनों ने कहा कि सांप को मारना और उसके बच्चों को छोड़ देना अक्ल़ का काम नहीं है और सिर्फ इन दोनों के ही कहने से अंग्रेज बच्चों और औरतों को कत्ल किया गया। यह सुनकर जरनैल गुस्से से लाल-पीला हो गया और उसने फिर अब्बा हजरत की कोई बात न सुनी। हालांकि वे बराबर कहते रहे कि यह बिलकुल झूठ है। लेकिन जरनैल की आंखें लाल हो गई थीं। उसने कोई बात न सुनी और हुक्म दिया कि अभी इन दोनों को गोली से उड़ा दो और फिर यह कहा कि इन दोनों ने हमारी औरतों और बच्चों को कत्ल कराया लेकिन हम इन पर रहम करते हैं और इसकी औरत और बच्चों को छोड़ देते हैं। इन दोनों को छावनी से बाहर निकाल दो। यह जहां चाहें चली जाएं।

गोरे और देसी सिपाही आगे बढ़े और उन्होंने भाई और अब्बा हजरत के हाथ पीठ के पीछे बांध दिए। अब्बा हजरत मुझको देखकर रोने लगे लेकिन भाई चुप खड़े रहे। अम्मा हजरत ने चीख मारी और वे बेहोश होकर गिर पड़ीं। मैं दौड़ी कि अब्बा हजरत को लिपट जाऊं मगर एक सिपाही ने मुझको जोर से धक्का दिया और मैं अम्मा हजरत पर गिर पड़ी और मैंने देखा कि अब्बा हजरत और भाई को सिपाही खींचते हुए दूर ले गए। उनके सामने पांच छह सिपाही बंदूकें लेकर खड़े

हो गए। उनके पास जरनैल भी खड़ा हो गया और उसने ऊंची आवाज में कुछ कहा जो मैं समझ नहीं सकी। इसके बाद सिपाहियों को इशारा किया और सिपाहियों ने बंदूकें अपनी छाती पर रखीं और बंदूकों का मुंह अब्बा हजरत और भाई की तरफ किया। उस वक्त अब्बा हजरत की आवाज आई और उन्होंने मेरा नाम लेकर पुकारा और कहा, "लो बेटी, अल्लाह बेली। हम दुनिया से जाते हैं।" फिर भाई की आवाजें आईं, "अम्मा, अम्मा, मुझसे तुम्हारी जुदाई देखी नहीं जाती। सलाम, मैं मरता हूं।"

बंदूकों की आवाजें आईं और बहुत-सा धुआं निकला। मैंने देखा कि भाई और अब्बा मिट्टी में लोट रहे हैं। मैं रो रही थी और मेरा दिल डर के मारे बैठा जा रहा था। अम्मा को कुछ होश आया और मैंने उनसे कहा कि भाई और अब्बा को मार डाला। देखो, वे मिट्टी में पड़े तड़प रहे हैं। अम्मा जान, उसके सीने से खून उफन रहा है। अब मेरे भाई और अब्बा मुझसे बिछुड़ गए। अब वे मुझसे कभी नहीं मिलेंगे। अब्बा ने तो मुझे पुकारा भी था और भाई ने तुमको आवाज दी थी। अच्छी अम्मा, अब क्या होगा? क्या यह हमको भी मार डालेंगे? क्या ये हमको कैदी बना लेंगे? अम्मा दोनों हाथ टेककर उठी और उन्होंने भाई और अब्बा की लाशों को ध्यान से देखा। उनका तड़पना बंद हो गया था और निढाल होकर कहा, "मेरा बेटा, मेरा लाल, मेरी सोलह बरस की मेहनत, मेरी जिंदगी का आखिरी सहारा, मेरा दूल्हा मुझसे छिन गया, मैं मिट गई। मेरा इस दुनिया में कुछ नहीं रहा। मैं दुनिया में आई थी, या अल्लाह यह सपना है या सचमुच मुझपर मुसीबत आई है। मेरा सरताज ही मिट्टी में मिल गया और और यह भी जवान बेटे के साथ खून में नहाया पड़ा है। ये दोनों तो गदर शुरू होने के बाद आखिर तक घर से कभी बाहर नहीं निकले थे। अरे तूने किस दिन का बदला लिया। मुझ बीमार दुखिया पर भी तुझे रहम न आया। तूने इस भोली-भाली बच्ची का भी ख्याल नहीं किया और हमारे उत्तराधिकारियों को बेवजह और बेकसूर खून में डुबो दिया।"

अम्मा ये कह रही थीं कि देसी फौज के सिपाही आए। मुझको और अम्मा को हाथ पकड़कर उठाया और खींचते हुए ले चले। हम दोनों लाशों के पास से गुजरे। गोलियां उनकी छाती और चेहरे पर लगी हुई थीं। खून ने बहुत कुछ छिपा दिया था और लाशें चुपचाप पड़ी थीं। सिपाही हमको खींचते हुए लिए जा रहे थे। न अम्मा चल सकती थीं, न मैं; लेकिन वे बकरियों की तरह हमें खींचे लिए जा रहे थे। पहाड़ी पर पत्थरों से हमारे पांव लहू-लुहान हो गए थे और मैं यह नहीं

कह सकती कि दुनिया में जैसी तकलीफ उस वक्त हमें थी ऐसी तकलीफ और भी किसी को पेश आ सकती है।

फौजी छावनी से बाहर लाकर सिपाहियों ने हमको छोड़ दिया। अम्मा बिल्कुल बेहोश पड़ी थीं और मैं उनके पास बैठी रो रही थी। थोड़ी देर में एक घसियारा घास की गठरी लिए वहां से गुजरा। वह मेरे पास आया और उसने गठरी सिर से उतार कर अम्मा को देखा और कहा कि यह औरत तो मर गई। वह हिंदू था। मुझको वहीं छोड़ कर वह छावनी में गया और वहां से दो तीन मुसलमान घसिआरों को लाया। उन सबने भी यही कहा कि यह औरत मर गई है। उन्होंने मेरे और अम्मा के हाथ और गले के जेवर उतार दिए और वे सब सरकारी खजाने में गए। लेकिन यह हमारा हक था। इसके बाद उन्होंने गड्ढा खोदकर अम्मा को दबा दिया और दो आदमी मुझको उठाकर अजमेरी दरवाजे की तरफ लाए और यहां छोड़कर चले गए। मैं अकेली बैठी रो रही थी कि खानिम के बाजार से मुसलमान सुनार अपनी औरतों को लिए वहां आए जो कुतब साहिब जा रहे थे। वे मुझको अपने साथ कुतब साहिब ले गए। जब शहर में अमन चैन हो गया और वे मुसलमान सुनार भी दिल्ली में वापस आए तो मुझको मेरे रिश्ते के चंद शहजादों के हवालों कर दिया और मैं उनके पास रहकर बड़ी हुई। उन्हीं में मेरी शादी हुई और शादी के बाद ही मेरी पेंशन हो गई। खुदा ने मुझे कई बच्चे दिए लेकिन कोई भी जिंदा न रहा। यहां तक कि शौहर भी मर गया। और अब चार साल से आंखें भी जाती रहीं।

सुन लिया मियां, दुखियारी की यही कहानी है। मेरे अंग-अंग से हाय-हाय की आवाजें आती हैं। मैंने इस दुनिया में बस दस साल की उम्र तक आराम देखा है और सत्तर बरस तक मुसीबतें उठाई हैं। अब कब्र में पांव लटकाए बैठी हूं। आज मरी तो कल मरी। ये बेचारी बड़ी बी मिल गई हैं। बाजार से जरूरत का सामान ले आती हैं और रात-दिन पास बैठी रहती हैं। और हम दोनों आखरी उम्र के दुख भरे दिन मिल-जुलकर जैसे-तैसे गुजार रहे हैं।"

नरगिस नजर

शहजादी नरगिस नजर मिर्जा शाह रुख सुपुत्र बहादुर शाह की बेटी थीं। सन् 1857 के गदर में उनकी आयु सतरह साल की थी।

लालकिला दिल्ली में दीवान-ए-खास और मोती मस्जिद के पश्चिम में गोरा बाग के पूर्व में एक पथरों का तालाब है जिसके बीच में एक सुंदर महल बना हुआ है और इसके उत्तर से नहर आती है। संगमरमर की झिलकियां और चिरागदान बने हुए हैं। इस पर से नहर का पानी गुजरता हुआ इस तालाब में आता था। मिर्जा शाह रुख बहादुर इसी जल महल में रहते थे। उनकी पत्नी का देहांत हो गया था। इसलिए मिर्जा साहिब को अपनी बेटी नरगिस नजर से बहुत ही प्यार था।

जल महल को कश्मीरी शालों, रुमी कालीनों और बनारसी कपड़ों से बहुत ही सजाया गया था। नरगिस नजर को महल के शृंगार का बहुत शौक था और वह इस मामले में बहुत सुचारु थीं। उनका महल सारे किले में सब हवेलियों और महलों से अधिक सुंदर और सजा हुआ समझा जाता था।

नरगिस नजर सवेरे सूरज निकलने के बाद उठती थीं। गर्मी के दिनों में उनका छप्परखट आंगन में बिछाया जाता था। जहां संगमरमर का फर्श था। छप्परखट के पाए और डंडे सोने के थे और उन पर नगीने जड़े हुए थे। सुंदर रेशमी कपड़े की मसहरी थी। अंदर रेशमी तकिए रखे रहते थे। चार कोमल और नर्म तकिए सिरहाने होते थे। सिरहाने के तकियों के पास ही दो छोटे-छोटे गोल-गोल तकिए होते थे जिनको गलतकिया कहा जाता था। ये तकिए गाल की टेक के लिए थे कि अगर शहजादी का सिर तकियों से नीचे आ जाए तो गल तकिए उनके गाल को तकलीफ से बचा लें। बड़े-बड़े दो तकिए दोनों पहलुओं में होते थे कि शहजादी

साहिबा अपने घुटनों को सहारा दे सकें। रात को जब नरगिस नजर मसहरी के अंदर जाती थीं तो मोलसरी, जूही और चंपा के फूल उनके गल तकियों के पास रखे जाते थे ताकि रात को उनकी सुगंध शहजादी को प्रफुल्लित करती रहे। नरगिस नजर के मसहरी में जाते ही नाचने वाली छोकरियां आ जाती थीं और धीमे स्वरों में गाती थीं तब शहजादी को नींद आती थी। सवेरे भी सूरज निकलने से पहले ये नाचने-गानेवाली लड़कियां मसहरी के पास आकर गाती थीं और उनकी सुरीली आवाजों को सुनकर शहजादी साहिबा बेदार होती थीं।

उठने के बाद शहजादी मसहरी के अंदर बैठ जातीं और देर तक जम्हाइयां लेतीं, अंगड़ाइयां लेतीं और गानेवाली लड़कियां उनसे हंसी की बातें करतीं।

एक कहती, "ऐ हुजूर, जम्हाई आती है रुमाल हाजिर करूं। मुंह को ढक लीजिए।"

दूसरी कहती, "सरकार, अंगड़ाई देखने को तालाब की मछलियां बेबस होकर पानी के ऊपर चली आ रही हैं।" नरगिस नजर आंखें मलकर और मुस्कराकर कहती, "चल दूर हो मुई, हर बार कैसी झूठी बातें सुनाती है।" तो छोकरी कहती, "मैं झूठ कहती हूं या सच आइने से पूछ लीजिए, वह भी सामने आपको देख रहा है। इसके अंदर भी तो बाल बिखर रहे हैं। वह भी तो मेंहदी लगी लाल-लाल उंगलियां ऊंची करके सरकार की अंगड़ाई की तारीफ कर रहा है। वहां भी तो एक मस्ती छाई हुई है।"

तीसरी कहती, "सूरज की किरणें लाल-लाल बादलों से ऐसे निकलीं जैसे सरकार के लाल-लाल होठों से सफेद-सफेद दांत और ये गाल तो तड़के का नूर है। बाल बिखरकर जो चेहरे पर आए हैं तो ऐसा मालूम होता है कि चौदहवीं रात के चांद पर बादल छाए हुए चले आए हैं। मगर चांदनी से मात खाकर उनका कलेजा फट गया है और चांद के चारों तरफ अपने कलेजे के टुकड़ों को बिखेर दिया है।"

नरगिस नजर ये बातें सुनकर मुस्कराती हुई मसहरी के बाहर आतीं। चौकी पर बैठ जातीं, फिर बाहर आकर खली और बेसन से मुंह-हाथ धोतीं और फिर जोड़ा बदला जाता, नाश्ता किया जाता। इसके बाद घर की साज-सज्जा को खुद जाकर देखतीं। चीजों के सवारने में नई-नई ईजादें (आविष्कार) होतीं। दोपहर के खाने के बाद गाना होता। शाम को चमन में गुल गश्त (फूलों की सैर) का मामूल पूरा किया जाता। रात के खाने में बड़ी बहार होती। बाजे बज रहे हैं, गाने हो रहे हैं और मुसाहिब लड़कियों (सहेलियों) के साथ खाना खाया जा रहा है।

जिस रात बहादुर शाह बादशाह लालकिले से निकलकर हुमायूं के मकबरे में

गए और विश्वास हो गया कि सवेरे अंग्रेज दिल्ली पर विजय पा लेंगे तो नरगिस नजर चुपचाप जल महल के किनारे पर खड़ी चांदनी को देख रही थीं। उनका प्रतिबिंब तालाब में पड़ रहा था और पानी में अपना प्रतिबिंब देखकर उन्हें एक अजीब सा नशा महसूस हो रहा था।

एकाएक उनके पिता मिर्जा शाह रुख अंदर आए और उन्होंने कहा, "नरगिस बेटा, मैं अब्बा हजरत (बहादुरशाह) के साथ जाना चाहता हूं। तुम अभी चलोगी या सवारी का बंदोबस्त कर दूं। सवेरे आ जाना।" नरगिस नजर ने कहा, "अब्बा जान, आप भी अभी नहीं जाएं। पिछली रात मेरे साथ चलिएगा। मैं दादा हजरत के साथ जाना मुनासिब नहीं समझती। अंग्रेज फौज उनकी तलाश करेंगी और जो लोग उनके साथ होंगे वे सब मुजरिम समझे जाएंगे। इसलिए हुमायूं के मकबरे में दादा हजरत के साथ जाना ठीक नहीं है। गाजीनगर (गाजियाबाद) में चलिए। वहां मेरी अन्ना का घर है और सुना है कि वह बहुत अच्छी और सुरक्षित जगह है। भेस बदलकर चलना चाहिए। जब यह बला दूर हो जाएगी तो फिर यहां आ जाएंगे।

मिर्जा ने कहा, "अच्छा, जैसी तुम्हारी राय हो। गाजीनगर जाने के लिए रथों का बंदोबस्त करता हूं। तुम्हारे साथ कौन-कौन जाएगा?"

नरगिस नजर ने जवाब दिया, "कोई नहीं, सिर्फ मैं अकेली चलूंगी। क्योंकि नौकरों को साथ रखना भी मुनासिब नहीं है और फिर नौकर साथ जाने के लिए राजी भी मालूम नहीं होते।" मिर्जा यह सुनकर बाहर चले गए और नरगिस नजर चांद और तालाब के चांद के प्रतिबिंब को देखने लगी।

कुछ देर बाद नरगिस नजर ने मुलाजिम औरतों को आवाज दी लेकिन किसी ने जवाब नहीं दिया। पता चला कि सब भाग गए हैं और नरगिस नजर सारे जल महल में अकेली है। यह पहला मौका था कि नरगिस नजर ने हाकिमाना आवाज दी और जवाब में कोई नहीं बोला। नरगिस नजर घबराकर महल के अंदर गईं। बत्तियां जल रही थीं मगर कोई मौजूद न था। नरगिस नजर को अंदर डर लगा और फिर वह बाहर आंगन में आ गई। किले में जगह-जगह से बोलने की आवाजें आ रही थीं और ऐसा मालूम होता था कि चारों तरफ से लोग घरों को छोड़कर बाहर निकल रहे हैं। नरगिस नजर ने बहुत देर तक अपने पिता की राह देखी लेकिन वे नहीं आए। नरगिस नजर घबराकर रोने लगी। रात के दो बजे एक ख्वाजा सरा महल में आया और उसने कहा, "साहिबे-आलम (मिर्जा शाह रुख) ने फरमाया है कि अंग्रेजी जासूस मेरी तलाश में किले के अंदर और बाहर चारों तरफ फैले हुए हैं। मैं तुम्हारे साथ गाजीनगर नहीं जा सकता। सवारी का इंतजाम कर दिया है।

तुम ख्वाजा सरा के साथ चली जाओ और मैं भेस बदलकर कहीं चला जाता हूं।"

नरगिस नजर ने घबराकर कहा, "आखिर कहां जाने का इरादा है?" ख्वाजा सरा बोला, "मुझे मालूम नहीं।" नरगिस नजर ने हाकिमाना लहजे में कहा, "जा, यह मालूम करके आ कि अब्बा हजरत कहां जाने वाले हैं? वे कपड़े बदलकर मेरे साथ गाजीनगर क्यों नहीं चल रहे हैं?"

ख्वाजा सरा तुरंत वापस गया और नरगिस नजर आंगन में टहलती रहीं। कुछ देर के बाद ख्वाजा सरा वापस आया और उसने कहा, "अब्बा हजरत साईस के कपड़े पहनकर किले के बाहर चले गए और कोई नहीं जानता कि वे कहां गए हैं। आपकी सवारी के लिए रथ तैयार है।" नरगिस नजर को रोना आ गया। उनकी जिंदगी में यह पहला मौका था कि उन्होंने निहायत बेकसी और बेबसी की हालत में हिचकियां लेकर आंसू बहाए। उन्होंने जवाहरात का संदूक और कुछ जरूरी कपड़े साथ लिए जिनको ख्वाजा सरा ने उठा लिया और जल महल से निकले और सवार होने से पहले मुड़कर जल महल और उसकी साज सज्जा को बहुत देर तक खड़े होकर देखा और फिर कहा कि 'खबर नहीं कि तुझको फिर देखना नसीब होगा या आज तू हमेशा के लिए मुझसे जुदा हो रहा है।

रात के तीन बज चुके थे। नरगिस नजर रथ में बैठी गाजीनगर की ओर जा रही थीं। सवेरे आठ बजे वहां पहुंच गईं। रास्ते में उनको बहुत से लोग आते-जाते मिले मगर किसी ने उनके रथ को रोका नहीं। गाजीनगर में नरगिस नजर की अन्ना का घर मशहूर था। ज्यों ही नरगिस नजर उनके घर के सामने रथ से उतरीं अन्ना दौड़ी हुई घर से आ गईं और उसने दोनों हाथों से शहजादी की बलाएं ली और अंदर ले जाकर बिठाया और अपनी हैसियत से बढ़ कर उनका आदर-सत्कार किया।

नरगिस नजर दो तीन रोज अन्ना के घर में आराम से रहीं। अचानक खबर फैल गई कि बादशाह पकड़े गए हैं, शहजादी की हत्या कर दी गई है और फौज गाजियाबाद को लूटने आ रही है। नरगिस नजर ने जवाहरात का संदूक अन्ना से कहकर जमीन में दबवा दिया और मुसीबत का इंतजार करने लगीं।

थोड़ी देर मे सिख फौज ने गाजियाबाद में प्रवेश किया और बागियों की तलाश शुरू कर दी। मुखबिरों ने कहा कि बादशाह की पोती अपनी अन्ना के घर में मौजूद है। दो सिख सरकार चार सिपाहियों के साथ अन्ना के घर में आए और अन्ना के सब घर वालों को पकड़ लिया। और नरगिस नजर कोठरियों में छिप गई थीं। लेकिन उसको भी किवाड़ तोड़कर बाहर निकाला गया और बेपर्दा सामने

खड़ा किया गया। सरदार ने पूछा, "क्या तुम बहादुरशाह की पोती हो?" नरगिस नजर ने कहा, "मैं एक आदमी की बेटी हूं। बादशाह की औलाद होती तो इस गरीब घर में क्यों आती? अगर खुदा ने बादशाह की पोती बनाया होता तो मुझको तुम इस तरह बेपर्दा सामने खड़ा न करते। तुम हिंदुस्तानी हो। तुमको शर्म नहीं आती कि अपने मुल्क की औरतों पर जुल्म करते हो?" सरदार ने कहा, "हमने क्या जुल्म किया? हम तो ये जानना चाहते हैं कि तुम कौन हो? हमने सुना है कि तुम बहादुरशाह की पोती हो और तुम्हारे बाप ने बहुत से अंग्रेजों, औरतों और बच्चों को किले के अंदर कत्ल किया था।" नरगिस नजर ने कहा, "जो करता है वही भरता है। अगर मेरे बाप ने ऐसा किया होगा तो उनसे पूछो। मैंने कोई जुल्म नहीं किया। मैंने किसी को नहीं मारा।

यह सुनकर दूसरा नौजवान सिख सरदार बोला, "हां, तुम तो आंखों से कत्ल करती हो। तुमको तलवारों से, हथियारों से मारने की क्या जरूरत है।"

नरगिस नजर ने बहुत हौसले से उत्तर दिया हालांकि उसकी जिंदगी में पराए मर्दों से बात करने का यह पहला अवसर था, "खामोश रहो। बादशाहों से ऐसी बदतमीजी के साथ बात नहीं करते। तुम्हारी जबान गद्दी के पीछे से निकाल ली जाएगी।" युवक सरदार यह सुनकर बिगड़ा और उसने आगे बढ़ कर नरगिस नजर के बाल पकड़ लिए और जोर से झटका दिया। बूढ़े सिख सरदार ने युवक सरदार को रोका और कहा, "औरत के साथ ऐसी ज्यादती करना मुनासिब नहीं।" युवक सरदार ने यह बात सुनकर बाल छोड़ दिए। किराए की एक बैलगाड़ी मंगवाई गई और उसमें नरगिस नजर को बिठाया गया। अन्ना और उसके घर वाले भी सब बंदी बनकर पैदल साथ चले। नरगिस नजर से पूछा गया, "तुम्हारे जेवर रुपया पैसा कहां है?" उन्होंने कहा, "मैं खुद ही जेवर हूं समझने वालों के लिए खुद ही जवाहरात और दौलत हूं। मेरे पास कुछ और नहीं है।"

यह सुनकर दोनों सरदार चुप हो गए और बैलगाड़ी को दिल्ली की ओर ले चले।

हिंडन नदी के पास गांव के जाटों और गूजरों ने सिख फौजियों पर बंदूकें चलाईं और देर तक आपस में लड़ाई होती रही। सिख थोड़े थे और गांव वाले ज्यादा थे। सिख सब मारे गए और गांव वाले बंदियों को अपने साथ गांव में ले गए।

गंवारों ने नरगिस नजर के शरीर पर जो दो चार कीमती जेवर थे उनको उतार लिया और कीमती कपड़े भी उतरवा दिए और किसी चमारन का फटा हुआ लहंगा

और कुर्ता और मैला दुपट्टा पहनने को दिया। नरगिस नजर ने रो-रो कर अपना बुरा हाल कर लिया और मजबूरी में तन ढकने को ये कपड़े पहने। थोड़ी देर में पास के गांव से कुछ मुसलमान गंवार आए और उनके नंबरदार ने नरगिस नजर को गूजरों से खरीद लिया और अपने गांव में ले गया। ये लोग जात के रांगड़ थे और कुछ लोग तगा कौम के मुसलमान थे। नंबरदार ने अपने लड़के का पैगाम दिया कि तेरी शादी उसके साथ कर दें। ये बूढ़ा आदमी था और उसका लड़का यद्यपि गंवार था लेकिन सूरत शक्ल का अच्छा था। नरगिस नजर ने हां कह दी और गांव के काजी ने उनका निकाह पढ़ा दिया। नरगिस नजर तीन चार महीने नंबरदार के घर में नई दुल्हन बनी आराम से दिन गुजारती रहीं।

अंग्रेजों का कब्जा पूरी तरह हो गया और उनके जासूस जगह-जगह खबरें लेते हुए फिर रहे थे। किसी जासूस ने दिल्ली के हाकिम को खबर दी कि मिर्जा बागी नहीं मिल सके लेकिन उनकी बेटी फलां गांव में फलां नंबरदार के घर मौजूद है। अंग्रेज हाकिम ने इस गांव में पुलिस को भेजा। मेरठ की पुलिस ने आकर गांव को घेर लिया। नरगिस नजर और उसके पति और ससुर को पकड़ कर दिल्ली में लाया गया। हाकिम ने नरगिस नजर से मिर्जा के बारे में बहुत से सवाल पूछे लेकिन जब उन्हें कोई महत्वपूर्ण उत्तर नहीं मिला तो आदेश दिया कि नंबरदार और उसका बेटा बागी मालूम होते हैं और इन दोनों ने एक बागी की बेटी को आश्रय दिया है, इसलिए इन दोनों को जेल भेज दिया जाय और यह औरत दिल्ली में किसी मुसलमान के हवाले कर दी जाए। इस तरह नंबरदार और उसका बेटा दस-दस साल के लिए जेल भेज दिए गए। नरगिस नजर से पूछा गया कि वह किसके यहां रहना चाहती है। शहजादी ने जवाब दिया कि अगर मेरे खानदान के लोग दिल्ली में हों तो उनके पास भेज दिया जाए। मालूम हुआ कि तेमूरिया खानदान के लोग अभी तक छिपे हुए हैं या जंगलों और देहातों में रहते हैं। दिल्ली शहर में अभी तक कोई नहीं आया। इसलिए नरगिस नजर एक मुसलमान सिपाही के हवाले कर दी गई जो उनको अपने घर में ले गया। उस, सिपाही की पत्नी मौजूद थी उसने देखा कि एक सुंदर जवान औरत घर में आई है तो उसने पति को दोहत्थड़ मारा और नरगिस नजर को भी धक्का देकर घर से बाहर निकाल दिया।

यह पहला अवसर था कि नरगिस नजर को किसी ने धक्का दिया। सिपाही नरगिस नजर को साथ लेकर अपने एक दोस्त के यहां चला गया। वह बड़ी उम्र के मुसलमान थे और घर में अकेले रहते थे। उन्होंने शहजादी का हाल सुना तो रोने लगे और बहुत प्यार के साथ अपने घर में जगह दी। नरगिस नजर एक रात

आराम से घर में रहीं।

दूसरी रात को नरगिस नजर सोई हुई थी कि कुछ आदमियों ने उनका मुंह अपने हाथों से बंद किया और उठाकर कहीं ले गए। नरगिस नजर ने बहुत हाथ-पांव मारे लेकिन उनकी पकड़ इतनी मजबूत थी कि वे बेचारी हिल भी न सकीं। वे लोग उसी गांव के रहने वाले थे जहां के नंबरदार के बेटे से नरगिस नजर का निकाह हुआ था। मगर वे दिल्ली के निकट एक गांव में ले गए और वहां एक छप्पर में ठहराया और एक चारपाई सोने के लिए दी। यह गांव भी तगा मुसलमानों का था।

नरगिस जिस घर में रहती थीं वह नंबरदार का घर था। तीन चार साल तक नरगिस नजर इस घर में रहीं। वह सारे घर का काम करती थीं लेकिन गोबर थापना और दूध दोहना उन्हें नहीं आता था।

चार साल के बाद उनका पति जेल से बाहर आ गया। वक्त से पहले ही सरकार ने उसको रिहाई दे दी। वह नरगिस नजर को इस गांव से अपने घर ले गया जहां सारी उम्र गुजार दी। उनके कई बच्चे हुए और सन् 1911 में नरगिस नजर का निधन हो गया।

नरगिस नजर कहती थीं कि जब मैं दिल्ली के निकट तगा नंबरदार के घर में रहती थी उन्हीं दिनों, बरसात का मौसम था और बादल गरज रहे थे, बिजली चमक रही थी और मैं अकेली अपने छप्पर में मोटे खद्दर की एक मैली चादर ओढ़े खुरदरी चारपाई पर लेटी थी। सपने में देखा जैसे महल में सोने के जड़ाऊ छप्परखट के अंदर लेटी हूं। जूही और चंपा और मौलसिरी के फूल और रेशमी तकिए मेरे पास हैं और गाने वाली लड़कियां धीमे सुरों में गा रही हैं और मुझे एक अजीफ लुत्फ आ रहा है। इसी स्वप्न की हालत में मैंने एक गाने वाली को आवाज दी कि मसहरी का पर्दा उठा और मुझको सहारा देकर बिठाया। मैंने देखा कि वह दौड़ी हुई आई और उसने मुझे गोद में लेकर उठाया और शोखी से जरा मुझको दबा भी दिया। मैंने उसको एक थप्पड़ मारा और वह जोर से हंसी तो मेरी आंख खुल गई। अंधेरा बहुत ज्यादा था। मुझको इस सपने ने और जल महल की याद ने बेकरार कर दिया। मैं छप्पर के दरवाजे पर मोटे खद्दर की चादर ओढ़े हुए आखिर खड़ी हो गई। मेघ बहुत जोर से बरस रहा था, बिजली चमकती थी तो आंगन का पानी दिखाई देता था और मुझे ऐसा मालूम हो रहा था कि जैसे मैं जल महल के आंगन में खड़ी चांद और तालाब में उसके प्रतिबिंब का तमाशा देख रही हूं।

जबसे मुसीबत के दिन आए थे, मैं कभी नहीं घबराई थी और न ही कभी

अच्छे दिनों को याद किया था। लेकिन आज पता नहीं क्या बात थी कि जल महल बार-बार याद आ रहा था और यह भी ख्याल आता था कि मैं हिंदुस्तान के सम्राट की पोती हूं और अपने पिता की लाडली हूं। और यह भी ख्याल आता था कि मैं सतरह बरस की उम्र तक शहजादी थी और आज एक निर्धन और नादार नौकरानी हूं। मेरे यहां सारे किले से अच्छे और सुंदर कपड़े थे और हर चीज बहुत सफाई से रखी जाती थी और यही मेरा रात-दिन का शौक था। लेकिन आज सब कुछ उलट है। अन्ना के घर में जो जेवर और जवाहरात दबाए थे बाद में उस जगह को गुप्त रूप से खोद कर देखा तो सब माल गायब था। पता नहीं कौन ले गया। पिछले जमाने की कोई भी चीज बाकी नहीं रही। सिर्फ मैं बाकी हूं और वह भी बदली हुई और हर बात में मिटी हुई।

इन ख्यालों का मुझ पर इतना ज्यादा असर हुआ कि मुझे गश आ गया और मैं वहीं बेहोश होकर गिर पड़ी और सवेंरे तक बेहोश पड़ी रही। सुबह हुई तो वही मैं थी जिसको सब नगू कहकर पुकारते थे और वही चूल्हा था जहां मैं रोटी पकाती थी और वही घर के सब काम थे जो मुझे रात दिन उन लौंडियों से बढ़ कर मेहनत के साथ करने पड़ते थे और मैं सोचती थी, "ख्वाब था जो कुछ देखा जो सुना अफसाना था. . .।"

मह जमाल

"दिलशाद ! गुदगुदियां न कर, मुझे सोने दे। नमाज कजा होती है तो क्या करूं। आंख खोलने को जी नहीं चाहता।"

"अरे गुदगुदियां मैंने नहीं कीं। यह गुलाब का फूल तुम्हारे तलवों से आंखें मल रहा है।"

"मैं इस फूल को मसल डालूंगी। इतने सवेरे मुझे क्यों जगाता है? मेरा दिल अभी सोने को चाहता है। जरा सुंदरी को बुला। बांसुरी बजाए हलके सुरों में भैरवी सुनाए। गुलचमन कहां है, चंपी करे। तू कोई कहानी सुना।"

"कहानी कहूंगी तो मुसाफिर रास्ता भूलेंगे। दिन में कहानी नहीं कहनी चाहिए। सुंदरी हाजिर है। गुलचमन को बुलाती हूं। अम्मा जान जाएं तो नाराज होंगी कि मह जमाल को अब तक नहीं जगाया। नमाज का वक्त निकला जाता है।"

सुंदरी बांसुरी बजा रही थी कि मह जमाल ने आंखें खोल दीं। बालों को समेटा, मुस्कराई और कलिमा पढ़ा। नरगिस ने सलाम किया। उत्तर में उसके एक चुटकी ली गई। अंगड़ाई लेकर उठ बैठी और कहा :

"दिलशाद हमने नरगिस के चुटकी ली तो ये हंसी नहीं। मुंह बना लिया। आ तू आ...। तेरे कान मरोड़ दूं और तू खूब हंस।"

दिलशाद उठकर भागी, दूर खड़ी हुई और कहा, "लीजिए, मैं खिलखिला कर हंसती हूं। आप समझ लीजिए कान मरोड़ दिए।"

मह जमाल ने फिर अंगड़ाई ली और मुस्कराती हुई चौकी पर जा बैठी। वजु किया। नमाज पढ़ी। आंगन में निकली, बाग के पास तख्त पर बैठी। कुरान शरीफ पढ़ना शुरू किया। सब लौंडियां (नौकरानियां) घर की सफाई में लग गईं। नाश्ते की तैयारी करने लगीं।

मह जमाल कुरान शरीफ पढ़ चुकी तो मालिन छोटी सी बांस की टोकरी में कुछ हरी मिर्च लेकर हाजिर हुई। पहले मह जमाल की बलाएं लीं, आशीर्वाद दिया, फिर बोली, "सरकार आज हुजूर के लगाए हुए पौधों में ये मिर्चें लगी थीं। आपको सम्मान सहित भेंट करने आई हूं।"

मह जमाल ने टोकरी हाथ में ले ली। सब नौकरानियों को पुकारा और मिर्चों के आगमन से महल में एक धूम मच गई। नरगिस ने कहा, "कैसी हरी-हरी चिकनी सूरत है।" दिलशाद बोली, "जैसे मालकिन के गाल।" सुंदरी ने कहा, "कैसी चुपचाप लेटी हैं जैसे मालकिन छप्परखट में सोती हैं।" गुलचमन बोली, "डाली से टूटी है घर से छूटी हैं। इसलिए कुछ चुप-चाप हैं।"

मह जमाल ने कहा, "मालिन को जोड़ा दो और कपड़े पहनाओ। पांच रुपए नकद भी देना। मेरे पौधों का पहला रस लाई है इसका मुंह भी मीठा कराना।"

मालिन को रेशमी जोड़ा मिला। चांदी के कड़े पहनाए गए। लड्डू खिलाए गए। पांच रुपए नकद और पान का बीड़ा मिला। वह दुआएं देती हुई अपने घर चली गई। उधर अम्मा जान को दासी ने सूचना दी कि मालकिन के पौधों में पहला फल आया है। वह बराबर के मकान में आईं। मुगलानी (ऊंचे दर्जे की दासी) साथ थीं। बेटी की बलाएं लीं। मह जमाल ने आदाब किया। अम्मा और मुग़लानी ने मिर्चों की खूब प्रशंसा की और देर तक मिर्चों की चर्चा घर में होती रही।

मह जमाल खुर्शीद जमाल की इकलौती बेटी थी। उसके पिता मिर्जा अली गौहर उर्फ नीली शाहआलम के बेटे अकबर शाह सानी (द्वितीय) के भाई थे जो मर चुके थे। ख्वासों (विशेष दासियों) से उनके कई बच्चे थे मगर बेगम से केवल एक लड़की मह जमाल पैदा हुई थी और वह भी बुढ़ापा आ जाने के बाद। जब मिर्जा नीली मरे तो मह जमाल की उम्र सिर्फ पांच साल थी। अब वह पांचवें साल में है। रंग सांवला है, चेहरा किताबी है, कद मझोला है, आंखें काली और अत्यंत रसीली और मादक हैं, आवाज में एक तरह की संवेदना है। जब हंसकर बोलती है तो ऐसा लगता है कोई मरसिया (किसी के मरणोपरांत उसके विषय में लिखी गई कविता) पढ़ा गया। सुनकर कलेजे पर चोट लगती है। वह बहुत चंचल, शोख, आराम पसंद और मृदुल स्वभाव की है। लाड़-प्यार में पली है। शहजादी है बिन बाप के इकलौती है और स्वभाव से कुछ जिद्दी और हठीली है। शरीर बहुत दुबला है। चलती है तो अप्राकृतिक ढंग से बदन को झुकाती है। फूलों की टहनी की तरह इधर-उधर झकोले खाती हुई चलती है। ठोकरें कदम-कदम पर लगती हैं। दासियां साथ दौड़ती हैं। बिस्मिल्लाह या अल्लाह खैर कहती जाती हैं।

फूल वालों की सैर थी। बहादुरशाह अपने नए जफर महल में जो दराह हजरत ख्वाजा कुतुब साहिब के दरवाजे के निकट बना था, तशरीफ रखते थे। बेगमात अंदर थीं। मगर खुर्शीद जमाल और मह जमाल ने दूसरा मकान लिया था। क्योंकि मिर्जा नीली के समय से ही उनकी और बहादुरशाह की अनबन थी। बहादुरशाह को अंग्रेज लाख रुपए महीना देते थे। उसमें से एक हजार रुपए प्रति मास खुर्शीद जमाल को अलग भेज दिए जाते थे। सस्ती का जमाना था। हजार रुपए आज कल के लाख रुपए के बराबर थे और खुर्शीद जमाल बहुत वैभव और आराम से जीवन बिता रही थी। जिस शाम को पंखा चढ़ा मह जमाल तीसरे पहर के समय बरामदे में चिलमन के पास बैठी थी। बाहर नफीरी बज रही थी। दिल्ली के हिंदू-मुसलमान रंग-बिरंगे बढ़िया कपड़े पहने पंखे के साथ थे। दुकानें सजी हुई थीं। सक्के (कमर पर मशक लादे हुए पानी वाले) कटोरे बजा रहे थे।

मगरिब (शाम की नमाज) का समय आया को खुर्शीद जमाल ने लौंडियों से कहला भेजा कि पहले आकर नमाज पढ़ लो फिर तमाशा देखना। मह जमाल उठी तो चलते समय उसने देखा कि एक फकीर सफेद कफनी (एक तरह का कपड़ा जो गले में ऊपर से पहना जाता है) पहने पीला चेहरा, नंगे सिर, नंगे पांव पंखों के पास से गुजर कर उसको देखता हुआ चला गया। उसकी सूरत और कफनी देखकर मह जमाल डर गई। नमाज में भी उसी का ख्याल आता रहा। सैर से निपट कर सोई तो रात को भी कफनी कई बार सपने में दिखाई दी। सवेरा हुआ। हल्का हल्का बुखार था। मां को सूचना मिली। उन्होंने कुछ पढ़कर फूंका संदूक से एक ताबीज निकाल कर गले में डाला। फकीरों को भीख भिजवाई।

दोपहर को बुखार तेज हो गया। मह जमाल चौंकती थी और कहती थी वह कफनी वाला आया। वह मुझको बुलाता है। अम्मा जी आना वह देखो, खड़ा मुस्कराता है।

मां ने दासियों से पूछा। उन्होंने कहा, "एक फकीर शाम को कफनी पहने जा रहा था। मालकिन नमाज के लिए उठीं तो चिलमन का पर्दा हट गया। फकीर ने इनको घूर कर देखा। उसके बाद वह कहीं चला गया।"

खुर्शीद जमाल ने नौकरों को हुक्म दिया कि उस वेशभूषा का फकीर जहां मिले उसको लाओ। नौकर सारे मेले में ढूंढते फिरे। शाम होते-होते वह फकीर मिला। खुर्शीद जमाल ने पर्दे के पास बिठाकर लड़की का हाल कहा। वह बोला, "मुझे अंदर ले चलो। मैं कुछ मंत्र पढ़कर फूंक दूंगा। अच्छी हो जाएगी।"

खुर्शीद जमाल ने अंदर पर्दा कराया। फकीर को पलंग के पास खड़ा किया।

उसने आंखें बंद करके दोनों हाथ अपने गालों पर रखे और चुप खड़ा रहा। फिर कहा, "लो लड़की अच्छी हो गई।"

देखा तो सचमुच बुखार उतर गया था। मह जमाल उठ बैठी। खुर्शीद जमाल और सब लौंडियां हैरान हो गईं। फकीर को बिठाया। कुछ रुपए और कपड़े के दो थान भेंट किए। फकीर ने कहा, "यह मैं नहीं लेता। मुझे लड़की की सूरत दिखा दो। नहीं तो वह फिर बीमार हो जाएगी।"

खुर्शीद जमाल पहले तो कुछ हिचकिचाई। फिर ख्याल आया कि फकीर तो मां-बाप होते हैं। पर्दा हटाया। मह जमाल ने फकीर को देखा और सिर झुका लिया। फकीर ने मह जमाल को देखा और बराबर देखता रहा। कुछ देर के बाद 'भला हो बाबा' कहकर उठा और चला गया।

वह तीस साल का जवान था। लेकिन बीमार मालूम होता था। चेहरे पर पीलापन बहुत ज्यादा था। सफेद कफनी के सिवाय कोई कपड़ा पास नहीं था। आंखें ऐसी मालूम होती थी जैसे रोते-रोते सूज गई हैं।

वह जवान उस मालिन का बेटा था जो मह जमाल के पास बाग की रक्षिका थी। मह जमाल को एक साल पहले बाग में देखा। अपनी गरीबी और मह जमाल की शान का ख्याल करके उसकी हिम्मत नहीं होती थी कि इस तकलीफ को किसी के सामने बयान करे जो मह जमाल के देखने से अपने आप उसके अंदर पैदा हो गई थी।

छह महीने वह इस झंझट में परेशान रहा। इसके बाद उसको एक हिंदू योगी मिला। जिससे उसने अपना हाल बयान किया। योगी ने एक सफेद कफनी दी कि इसको पहन ले तेरे सब काम पूरे हो जाएंगे। कफनी पहनते ही वह नीम मजजूब (दिवाना जो बेसुध रहता है और औल-पौल बकता है) हो गया। और घर बार छोड़कर जंगल में निकल गया। छह महीनों तक जंगलों में फिरता रहा। छह महीने के बाद अब वह फिर आबादी में आया था जहां उसने फिर मह जमाल को देखा। मगर अब उसके देखने में ऐसी ताकत पैदा हो गई थी कि मह जमाल को उसने एक निगाह में बीमार कर दिया।

यह घटना 14 सितंबर 1857 की है। एक रथ नजफगढ़ के नजदीक खड़ा था और खाकी वर्दी पहने फौजी सिपाही उसको घेरे हुए थे। ये सब लश्कर के सिपाही थे। इस रथ में खुर्शीद जमाल, मह जमाल और दो लौंडियां सवार थीं। बाहर चार नौकर तलवारें लिए खड़े थे। लश्कर के सिपाही कहते थे कि हम रथ के अंदर तलाशी लेंगे। इसमें कोई बागी छिपा है। बेगम के नौकर कहते थे कि अंदर सिर्फ

औरतें हैं। इसलिए हम पर्दा नहीं उठाने देंगे। बात बढ़ते-बढ़ते लड़ाई तक पहुंची। नौकरों ने तलवार चलाई और सब ऐसे लड़े कि एक भी जिंदा न बचा। फौजियों ने रथ का पर्दा उलट दिया। औरतों को देखा और जेवर का संदूक उनसे छीन लिया। इसके अलावा और जितना सामान था वह भी लूट कर आगे बढ़ गए। रथवान भाग गया था। बेगम लौंडियों को लेकर नजफगढ़ की तरफ चली कि इतने में गूजर लट्ठ लिए हुए आए और उनसे जेवरात और कपड़े मांगे। बेगम ने कहा कि हमको तो फौज वालों ने लूट लिया है। अब हमारे पास कुछ नहीं है। तुम रथ और बैल ले लो। लेकिन गूजरों ने नहीं माना और उन्होंने जबरदस्ती उनके बुर्के उतार डाले और सब फालतू कपड़े छीन लिए। खुर्शीद जमाल और लौंडियों को भला बुरा कहना शुरू किया। एक गूजर ने खुर्शीद जमाल के सिर पर लाठी मारी और दूसरों ने लौंडियों पर लाठियों से प्रहार किए। मह जमाल डरी सहमी चुप खड़ी थी। उसको किसी ने न छेड़ा। खुर्शीद जमाल का सिर फट गया और तड़पकर मर गई। दोनों लौंडियां भी गहरी चोट से न बच सकीं। मह जमाल अकेली खड़ी तमाशा देखती थी। मां को मरते देखा तो लिपट कर रोने लगी। गूजर तो मारपीट करके चले गए और मह जमाल रोते-रोते बेहोश हो गई। होश आया तो उसने देखा कि न उसकी मां की लाश है, न लौंडियों की लाशें ही हैं और न वह जंगल है। बल्कि वह एक घर के अंदर चारपाई पर लेटी है। सामने एक गाय बंधी खड़ी है। कुछ मुर्गियां आंगन में फिर रही हैं। और चालीस पचास साल की उम्र का मेवाती सामने बैठा अपनी बीवी से बातें कर रहा है। मह जमाल को फिर रोना आ गया और उसने मेवाती की बीवी से पूछा, "मेरी अम्मा कहां हैं?" मेवातन ने कहा, "वह मर गई। इसलिए उनको दफन कर दिया। तुमको यहां लाए हैं। तुम कुछ खाओगी? खीर पकी है, खा लो।"

मह जमाल ने कहा, "मुझे भूख नहीं है।" और हिचकियां ले-लेकर रोने लगीं। मेवातन पास आ गई और उसे दिलासा देने लगी और कहा, "बेटी, सबर करो। रोने से क्या होता है? अब तेरी मां जिंदा नहीं हो सकती। हमारे औलाद नहीं है। बेटी बनाकर रखेंगे। इस घर को तू अपना घर समझ। तू कौन है। तेरा बाप कहां है। और तू कहां जा रही थी?"

मह जमाल ने कहा, "मैं दिल्ली के बादशाह के खानदान से हूं। मेरे अब्बा जान ग्यारह साल पहले मर गए थे। हम गदर की भागड़ में घर से निकले थे। नजफगढ़ में हमारे बाप का माली रहता है। उसके घर में जाना चाहते थे कि रास्ते में पहले फौज वालों ने लूटा फिर गूजरों ने अम्मा और दो लौंडियों को मार डाला।"

कहते कहते फिर रोने लगी।

कुछ रोज मह जमाल मेवातन के यहां आराम से दिन काटती रही। अगरचे वह पिछले वक्त को याद कर कर के रोती थी लेकिन मेवातन की मुहब्बत के सबब उसको किसी बात की तकलीफ न थी। पकी-पकाई रोटी मिल जाती थी। फिर भी मह जमाल को यह घर और इसकी सादगी काटे खाती थी और उसको पिछले जमाने की ऐश याद आती थी।

एक रात को मह जमाल और मेवातन और उसका पति अपने मकान में सो रहा था कि पड़ोसी के एक छप्पर में आग लग गई और वहां से बढ़कर उनके छप्पर में भी आ लगी। धुएं की बू से मह जमाल की आंख खुल गई और वह चीखती हुई उठी। मेवातन और मेवाती का कुछ जेवर घर के अंदर रखा था। वे उसको लेने के लिए अंदर भागे और मह जमाल घर से बाहर भागी। कोठे का जलता हुआ छप्पर गिर पड़ा और वे दोनों उसके अंदर जलकर मर गए। कस्बे वालों ने बहुत मुश्किल से आग बुझाई। लेकिन मह जमाल का यह ठिकाना भी जलकर राख का ढेर हो गया।

कस्बे वालों ने सवेरे जली हुई लाशें दफन कीं। मह जमाल को एक नंबरदार घर में ले गया। उसके कई बच्चे और दो बीवियां थीं। मह जमाल को एक चारपाई सोने के लिए दी गई। वह दिन तो गुजर गया। रात को एक बीवी ने कहा, "अरी लड़की, दूध चूल्हे पर रख दे।" दूसरी बोली, "अरी इधर आ। मेरे बच्चे को सुला दे।" एक वक्त में दो हुक्म सुनकर मह जमाल कुछ घबरा गई। उसने न कभी दूध चूल्हे पर रखा था और न ही किसी बच्चे को लोरियां देकर सुलाया था। फिर भी वह दूध को उठाकर चूल्हे पर रखने के लिए चली। चूल्हे के नजदीक आकर ठोकर लगी, हांडी हाथ से गिर पड़ी और टूट गई। सारा दूध बिखर गया। आवाज सुनकर नंबरदार की बीवी दौड़कर आई और दूध गिरा हुआ देखकर एक दोहत्थड़ मह जमाल के गाल पर मारा और गालियां बकने लगी।

मार खाने और गालियां सुनने का उसका यह पहला मौका था। मह जमाल खड़ी थर-थर कांप रही थी। दूध उसके कपड़ों पर भी गिरा था। कभी वह कपड़ों को देखती और कभी नंबरदार की बीवी को जो लगातार गालियां बक रही थी।

आखिर वह दीवार के सहारे खड़ी हो गई और फूट-फूट कर रोने लगी। मह जमाल को रोता देखकर नंबरदार की बीवी को फिर गुस्सा आ गया और उसने अपनी जूती निकालकर दो-तीन बार उसके चेहरे पर मारी और कहा, "अब तू मुझको रोकर डराती है। मुई डायन। मेवातन को खा गई। अब यहां किसको खाने आई

है? मेरा सारा दूध फेंक दिया। खुदा रखे मेरे बच्चों को, दूध का चूल्हे के सामने गिरना अशुभ होता है। पता नहीं तेरा आना क्या मुसीबत लाएगा।"

मह जमाल के चेहरे पर जूतियां पड़ीं तो वह बिलबिला उठी और उसने दोनों हाथों से अपना मुंह छिपा लिया। इतने में नंबरदार आ गया। उसने यह शोर सुना तो वह भी वहां आ पहुंचा। मह जमाल वहां से भागकर अपनी चारपाई के पास आ गई। नंबरदार और उसकी बीवी दालान में आए। नंबरदार ने बीवी से पूछा कि क्या हुआ था। उसे सारी कहानी बयान की। नंबरदार ने कहा, "चलो जाने दो। गरीब औरत है। भूल हो गई। कुछ ख्याल न करो।" दूसरी बोली, "यह गरीब नहीं है, बहुत कामचोर है। मैंने आवाज दी कि बच्चे को सुला दे तो कानों में बोलमार कर चुप हो गई और सुनी-अनसुनी कर दी। तुम इसको बेगम बनाकर लाए हो या नौकर बना कर? नौकर है तो इसको काम करना पड़ेगा।" नंबरदार ने कहा, "मैं तो लावारिस समझकर लाया हूं। इसको काम करना चाहिए। हमको एक नौकरानी की जरूरत भी थी।"

मह जमाल ने डरते-डरते कहा, "मैंने आज तक कोई नौकरी नहीं की।" तुम मुझको सिखा दो। तकदीर ने यह वक्त मुझ पर डाला लेकिन नौकरी करनी न सिखाई। मेरे सामने तो लौंडियां काम करती थीं। मैंने तो कुछ काम नहीं किया।" कहते कहते उसको ऐसा रोना आया कि हिचकी बंध गई।

नंबरदार ने कहा, "तू रो मत। आहिस्ता-आहिस्ता सब काम आ जाएगा।" इसके बाद मह जमाल को कुछ खाने को दिया लेकिन उससे खाया न गया और वह खाली पेट ही सो गई। सुबह हुई तो नंबरदार की बीवी ने उसको जोर से झिंझोड़ा और कहा, "अरी उठती नहीं, कब तक सोएगी? झाडू देने का वक्त है।"

मह जमाल को याद आया कि दिलशाद, नरगिस, सुंदरी उसको किस तरह जगाया करती थीं। वह वक्त था और एक यह वक्त है। ठंडी सांस लेकर उठी और पुरानी आदत के मुताबिक दो चार अंगड़ाइयां लीं।

नंबरदार की बीवी ने धक्का देकर कहा, "अनिष्ट फैलाती है। उठती नहीं।" उस समय मह जमाल ने जाना कि अब वह सचमुच दासी बन गई है। शहजादी नहीं रही। तुरंत उठी, मगर आंसू लगातार उसकी आंखों से बह रहे थे। नंबरदार की दूसरी बीवी ने कहा, "इस औरत का गुजर हमारे घर में न होगा। हर वक्त रोती रहती है। बाल-बच्चों के घर में इस मनहूस को रखना अच्छा नहीं है।" इतने में नंबरदार आ गया और उसने बीवियों के कहने से मह जमाल को खड़े-खड़े घर से निकाल दिया।

मह जमाल हैरान परेशान खड़ी थी और बड़बड़ा रही थी, "या अल्लाह, किधर जाऊं।" इतने में उसको अपनी मालिन का ख्याल आया कि वह इसी कस्बे में रहती थी और अम्मा उसी के यहां ठहरने आई थीं।

मह जमाल यह सोच ही रही थी कि इतने में वही कफनी वाला फकीर सामने से आया और मह जमाल को देखकर खड़ा का खड़ा रह गया। मह जमाल पर इस अचानक मिलन का बहुत असर हुआ और वह भी गुमसुम सी हो गई। यद्यपि वह ऐसी मुसीबत के हाल में थी कि उसको तन-बदन का होश न था फिर भी फकीर और उसकी कफनी और लाल-लाल आंखों का ऐसा असर उस पर हुआ कि सारे शरीर में सनसनी होने लगी।

फकीर ने कहा, "मेरी मलिका तुम यहां कहां?" मह जमाल ने मेरी मलिका का शब्द सुना तो लिहाज से मुंह फेर लिया और कहा, "मुझको मेरी तकदीर यहां ले आई है।" और फिर सारी घटना कह सुनाई। फकीर ने कहा, "मेरा घर तो करीब है। मगर मैंने कभी आपका हाल न सुना। चलिए, मेरे घर चलिए।"

मह जमाल उसके पीछे-पीछे चली। वह अपने घर में गया और मालिन से मह जमाल का हाल कहा। वह दौड़ी हुई आई और मह जमाल के पैरों पर गिर पड़ी और परवानों की तरह उस पर न्यौछावर होने लगी। उसके बाद बड़े सम्मान से चारपाई पर बिठाया और हालात पूछती रही और कहा, "बेगम, यह घर आपका है। मेरे बेटे के सिवाय और कोई नहीं। आपके घर की बदौलत खुदा ने मालामाल कर रखा है। अब आप इस घर की मालकिन हैं। मैं और मेरा बेटा आपका गुलाम है।"

मालिन ने अपनी हैसियत के अनुसार इतना आराम मह जमाल को पहुंचाया कि वह अपनी मुसीबतों को भूल गई। उसने देखा कि मालिन के लड़के के पास दूर-दूर से मरीज आते हैं और वह कफनी पर हाथ मलता है। फिर अपने दोनों गालों पर उनको रखता है और आंखों को कुछ देर बंद करके खोल देता है और कहता है कि 'जाओ तुम अच्छे हो' और सब बीमार देखते ही देखते अच्छे हो जाते हैं।

मह जमाल कई दिनों तक यह तमाशा देखती रही फिर उसने मालिन से पूछा, "तेरे लड़के में यह ताकत कहां से आ गई। इसने मुझको भी एक दिन इसी तरह अच्छा कर दिया था।"

मालिन ने हाथ जोड़कर कहा, "बेगम, जान की अमान पाऊं तो कहूं।" मह जमाल ने कहा, "अब मैं जान की अमान देने के काबिल नहीं हूं। तुम कहो मुझे

इस भेद को मालूम करने का शौक है।"

मालिन ने कहा, "बेगम, मेरे लड़के को आप से मुहब्बत हो गई थी और आपके वियोग में उसने बहुत दुख उठाए। आखिर एक फकीर ने उसको यह कफनी दी। यह उसी की बरकत (विभूति) है जिससे हजारों को फायदा पहुंच रहा है और खुदा ने घर बैठे आप को भी यहां भेज दिया।

मह जमाल पर इस बात का बहुत असर हुआ और कुछ दिन के बाद उसने मालिन से कहकर काजी को बुलवाया और कफनीपोश (पहनने वाले) से निकाह कर लिया।

मालिन ने अपनी सारी उम्र मह जमाल की ऐसी सेवा की और इतने प्यार से रखा कि वह कहती थी कि मुझको अपना बचपन भी याद नहीं आया।

मगर मालिन के लड़के ने कफनी पहनना कभी न छोड़ा और उस कफनी का फैज दूर-दूर तक मशहूर हो गया और इस तरह मह जमाल की सोई किस्मत उस कफनी ने जगा दी।

सकीना ख़ानम

नवाब फ़ौलाद खान की लाश पहाड़ी में मोर्चे से घर में आई तो उनकी बहू को प्रसव पीड़ा हो रही थी। उस वक्त दिल्ली का कोई घर ऐसा न था जहां भागने और शहर से निकलने की तैयारी न हो रही हो। बहादुरशाह बादशाह के बारे में आम चर्चा थी कि वे भी लालकिले से निकलकर हुमायूं के मकबरे में चले गए हैं।

नवाब फौलाद खान खानदानी अमीर थे। लेकिन उनके पिता किसी कसूर के कारण मोइनुद्दीन अकबर शाह के दरबार में प्रकोप का शिकार हुए और मनसब (पद) और जागीर हाथ से खो बैठे। उस वक्त फ़ौलाद खान जवान थे और उन्होंने अंग्रेजी फौज में नौकरी कर ली थी। फौज में विद्रोह हुआ। तो वे भी अंग्रेजी सरकार से विमुख हो गए। आखिरी दिन वे अपने रिसाले को लेकर धावा बोलने गए। पहाड़ी पर अंग्रेजों का मोर्चा था। वह बहुत बहादुरी और हिम्मत से लड़े और आखिर एक गोले का टुकड़ा लगने से उनका काम तमाम हो गया। सिपाही उसकी लाश घर में लाए तो यह तमाशा देखा कि उनकी बहू को प्रसव पीड़ा हो रही है और कोई दाई नहीं मिल रही।

फौलाद खान का जवान बेटा चार दिन पहले मारा गया था। बेचारी औरत चार दिन की विधवा थी। सास को मरे हुए दो साल हो चुके थे। घर में ससुर के अलावा कोई वाली वारिस नहीं था। अब वह खून से नहाए, आंखें बंद किए हुए, चेहरे पर मौत की परछाइयां लिए घर में आए तो सकीना खानम की आंखों में दुनिया अंधेरी हो गई।

घर में सब कुछ मौजूद था। एक छोड़ चार-चार मामाएं खिदमत के लिए हाजिर थीं। लेकिन सिर पर हाथ धरने वाले की बात और ही होती है। सकीना खानम ने ससुर की मौत सुनी तो हाय-हाय पुकारती हुई बेहोश हो गई।

लाश आंगन में रखी थी । सिपाही दरवाजे पर खड़े थे । सकीना दालान में पलंग पर बेहोश पड़ी थी । दो मामाएं सकीना के सिरहाने और पांयती सांस रोके बैठी थीं । उनके होश उड़े हुए थे और वह खुदा के इस जुल्म को देखती हुई जोर-जोर से रो रही थी ।

थोड़ी देर के बाद सकीना खानम को होश आया । दर्द से व्याकुल होकर उसने मामा से कहा, "देखो, ड्योढ़ी पर कोई सिपाही होगा तो उससे कोई दाई तलाश करवाओ ।" मामा दौड़ी, दरवाजे पर गई और हे हे हे हे कहती हुई उलटे पांव भागी हुई आई और कहा, "बीबी सिपाहियों को गोरे खाकी पकड़े लिए जा रहे हैं और वे गोरे खाकी वर्दी वाले (गदर में अंग्रेज सिपाहियों को जनता इसी नाम से पुकारती थी) हमारे घर के नजदीक आए हैं ।" सकीना बोली, "मुरदार, दरवाजा तो बंद कर ।" मामा फिर वापस गई और उसने किवाड़ बंद कर लिए । अब दर्द और बढ़ा और सकीना के लड़का पैदा हुआ । न दाई पास थी और न ही कुछ सामान । खुदा ने खुद ही मुश्किल आसान कर दी । लेकिन सकीना सदमे से फिर बेहोश हो गई । मामा ने जल्दी से लड़के को नहलाया और कपड़े में लपेट कर गोद में ले लिया ।

सकीना की उम्र सत्रह साल की थी । शादी को सिर्फ सवा साल हुए थे । मायका फरूखाबाद में था और वह दिल्ली में जहां गदर मचा हुआ था । होश आया तो उसने मामा से कहा, "मुझे सहारा दो । उठा कर बिठाओ ।" वह बोली, "बेटी, ऐसा गजब न करना । अभी लेटी रहो । तुममें बैठने की ताकत कहां है ?" सकीना ने कहा, "तौबा बुआ, यह वक्त ऐसा नहीं कि सुख के बारे में सोचा जाय । खबर नहीं कि किस्मत अभी और क्या-क्या दिखायेगी ।"

मामा ने यह सुनकर सिर को सहारा दिया और सकीना को बिठाकर तकिया कमर से लगा दिया । सकीना ने पहले अपने बच्चे को ममता भरी नजरों से देखा जो दुनिया में उसकी सबसे पहली मुराद थी और चाहा कि बराबर देखती रहे । लेकिन उसको शर्म आ गई और उसने मुस्कराकर अपना मुंह बच्चे की तरफ से हटा लिया । ज्योंही उसने आंगन की ओर देखा तो फौलाद खान की लाश सामने दिखाई दी । उसकी खुशी को एक धक्का-सा लगा जिससे वह व्याकुल हो गई और समझदार होने के बावजूद वह बहकी-बहकी बातें कहने लगी । उसने कहना शुरू किया :

"अपने अनाथ पोते को देख लीजिए । उठिये । जिसकी आपको बहुत आकांक्षा थी वह पैदा हो गया । उसके बाप को गोद में लेकर कब्र में सुलाया था । इसको भी गोद में लेकर कब्र में सो जाइए । मैं इस हालत में इसको कहां और क्यों कर

रखूंगी। इस नन्हें मेहमान को क्या खबर कि जिस घर में वह आया है वह बहुत बड़ी मुसीबत में फंसा हुआ है। दिल्ली में आप मेरे बाप थे। आज आप भी मर गए। फरूखाबाद में मेरे बाप हैं लेकिन वह जीते जी मुझसे बिछुड़ गए। इस लड़के का भी एक बाप था जिससे मेरी दुनिया आबाद थी। उसको भी गोली ने मार डाला।"

यह कहकर सकीना को कुछ ख्याल आ गया। उसने दिल में छिपी हुई तकलीफ से व्याकुल होकर आहिस्ता से अपना बायां हाथ उस पर रख दिया और दांया हाथ मुंह पर रख गर्दन तकिए से लगाकर रोने लगी और रोते-रोते वह फिर बेहोश हो गई।

मामा ने सकीना को बेहोशी की हालत में छोड़ दिया और दरवाजा खोलकर बाहर चली गई कि किसी को बुलाए और फौलाद खान को दफन करने का बंदोबस्त करे। लेकिन सारी गली सुनसान थी। उसे एक भी आदमी चलता-फिरता दिखाई नहीं दिया इशारे से दूसरी मामा को बुलाया और कहा, "बुआ अपनी-अपनी जान की खैर मनाओ। चलो, यहां से भाग जाओ। बीबी के साथ रहेंगे तो जान मुफ्त में जाती रहेगी।"

वह बोली, "ऐसे कठिन वक्त में मालिक का साथ छोड़ देना और अपनी जान लेकर भाग जाना बड़ी बेवफाई की बात होगी और वह भी ऐसी हालत में कि एक बेबस बच्चा भी है।" पहली ने जवाब दिया, "पागल है क्या? किसकी वफा, किसकी मुहब्बत? जान है तो जहान है। मैं तो जाती हूं। अब तू जाने और तेरा काम। खाकी (अंग्रेजी सिपाही) अभी आते होंगे। घर लूट लेंगे और हम सबको मार डालेंगे। यह सुनकर दूसरी मामा का दिल भी कठोर हो गया। उसने तीसरी और चौथी मामा को इशारे से पास बुलाया। वे भी भागने पर तैयार हो गईं। "चलती हो तो कुछ पैसा साथ लेकर चलो। सकीना बेहोश पड़ी है। कुंजियां सिरहाने से ले लो और रुपए-पैसे का संदूक कोठरी से निकाल कर चल दो।"

जिसकी गोद में बच्चा था उसको तरस आया और कहने लगी, "इसको कौन रखेगा?" एक ने कहा, "मां के पास लिटा दो।" वह बोली, "नहीं बुआ, मैं इसको साथ ले जाऊंगी।" सबने एक जुबान में कहा, "वाह सुबहानअल्लाह, अपनी जान तो संभलती नहीं बच्चे को क्यों कर संभालोगी? इसके बगैर सकीना बेचारी तड़प-तड़पकर मर जाएगी। तुमको रहम नहीं आता!" उसने जवाब दिया, "तुम सकीना को अलग छोड़कर जाती हो इस पर तुमको रहम नहीं आता? मैं इस लाल को क्यों न ले जाऊं। मैं अपनी बेटी को दूंगी और वह इसको पालेगी। उसका

बच्चा पिछले दिनों मर गया है। यहां छोड़ा तो सकीना भी मरेगी और बच्चा भी।"

आखिर में चारों की चारों नकदी का संदूक और बच्चे को साथ लेकर घर से निकलकर अपने-अपने ठिकानों को चली गईं और सकीना को उस घर में अकेला छोड़ दिया जहां एक लाश के सिवा दूसरा कोई आदमी नहीं था।

सकीना प्रसव के कारण बहुत कमजोर और परेशान थी। वह चार घंटे से बेहोश पड़ी थी। रात के आठ बजे होश आया तो घर में घोर अंधेरा था। उसने आंखें फाड़-फाड़ कर चारों तरफ देखा। जब कुछ दिखाई नहीं दिया तो समझी कि वह मर गई है और यह अंधेरा कब्र का है। अचानक उसके मुंह से कलिमा निकला और उसने कहना शुरू किया, "दीन (धर्म) मेरा इस्लाम, रसूल मेरा मुहम्मद। खुदा मेरा मालिक जो अकेला है और उस जैसा दूसरा कोई नहीं। या अल्लाह, तौबा है। मैं बेगुनाह हूं। मेरी कब्र को अंधेरे में न रख और जन्नत की रोशनी दे।"

थोड़ी देर में उसको आकाश पर तारे चमकते दिखाई दिए और वह समझी कि वह जिंदा है और पलंग पर लेटी है। तब उसने मामाओं को आवाजें देनी शुरू कीं। जब कोई न बोला तो वह डर गई और उसके होश उड़ गए। वह उठ बैठी। उसकी कमजोरी जाती रही या फिर उसको याद नहीं रहा कि वह कमजोर है। पलंग से उठी और शमा रोशन की, तो उसने देखा कि घर में कोई आदमी नहीं है। आंगन में ससुर की लाश रखी है। इसके सिवाय कुछ नजर नहीं आया।

रात के वक्त लाश को देखकर उसे बहुत डर लगा और वह चीखें मारने लगी। मुहल्ले में कोई आदमी होता तो उसकी चीखें सुनकर अंदर आता। लेकिन मुहल्ले वाले तो पहले ही भाग चुके थे। सकीना चीखते-चीखते ऐसी डरी कि उसके होश जाते रहे और तड़ाखा खाकर फर्श पर गिर पड़ी और फिर उसको गश (मूर्छा) आ गया। सुबह तक उसे होश नहीं आया और वह फर्श पर पड़ी रही। जब दिन चढ़ा तो उसने आंखें खोली। उस वक्त दिल ने सहारा दिया। अगरचे दो वक्त से उसने कुछ खाया नहीं था, लेकिन दुख और डर मुसीबत की हालत में इंसान को मजबूत बना देता है। इसके अलावा फौजी घराने में पलने के कारण उसका दिल आम औरतों की तरह कमजोर नहीं था उसने चाहा कि लाश को दफन करने का इंतजाम करे और कुछ खाए भी क्योंकि भूख से वह निढाल हो रही थी। एकदम उसको ख्याल आया कि उसका बच्चा कहां गया। इस ख्याल का आना था कि कलेजे में ममता की एक हूक सी उठी और पागलों की तरह दौड़ कर सारे घर में ढूंढने लगी। जब बच्चा कहीं न मिला तो वह पानी के मटकों के ऊपर चपनियां उठा-उठाकर मटकों के अंदर झांकने लगी कि कहीं बच्चा उनके अंदर न हो। पलंग से तकिए

उठा-उठाकर छाती से लगाने लगी।

आखिर मुसीबत ने फिर उसका हौसला बढ़ाया। उसके दिल को थोड़ी-सी तसल्ली मिली और वह बच्चे के ख्याल को भूल गई। और ससुर के दफन का ख्याल उसके सामने आ गया। इसलिए उसने अलमारी खोली, एक सफेद चादर निकाली और शहीद की लाश पर डाला और मुसल्ला बिछाकर सजदे में गिर पड़ी और रो-रोकर कहने लगी :

"या खुदा, अरे एक बंदे की लाश है जिसे न कफन मिला है और न दफन। उसे न कब्र नसीब है और न नमाज। अपने फरिश्तों को भेज कि वे इसकी नमाज पढ़ें और अपनी कृपालुता की गोद में उसको दफन कर दे। मेरे साथ सबने धोखा किया और मेरा ताजदार भी दूसरे जहान में चला गया। मेरा लाल भी मुझसे छिन गया। अब तेरे सिवाय मेरा कोई वारिस नहीं है। मेरी बेकसी का यह सजदा कबूल कर और मेरा हाथ पकड़।"

सकीना खानम अभी सजदे में ही थी कि दरवाजा खुला और चार सिपाही खाकी वर्दी पहने अंदर आए। सकीना ने जल्दी से सिर उठाया और गैर मर्दों को आता देखकर चादर चेहरे पर डाल ली और डर कर कोने में छिपना चाहा लेकिन सिपाही अंदर आ चुके थे। उन्होंने सकीना को पकड़ लिया और जबरदस्ती चेहरा खोलकर देखा और सब मिलकर बोले, जवान है, जवान है और बहुत खूबसूरत।"

इसके बाद उन्होंने सकीना को छोड़ दिया और बाकी तलाशी लेने लगे। नकदी मामाएं ले गई थीं। कुछ जेवर और बढ़िया कपड़े उन्होंने लूटे। आंगन में लाश के ऊपर से चादर उठाकर उन्होंने कहा, "ओह यह कोई बड़ा बागी है।"

इसके बाद सिपाहियों ने सकीना का हाथ पकड़कर उसे उठा लिया और कहा कि उनके साथ चले। सकीना कुछ नहीं बोली और सिपाहियों की सख्ती से मजबूर होकर खड़ी हो गई। वह न कह सकी कि वह प्रसूता है। उसने यह भी नहीं कहा कि वह भूखी है। उसके मुंह से यह भी न निकला कि उसे न सताओ। उसका इस दुनिया में कोई नहीं है। उसको खानदानी शराफत और आत्मसम्मान बात करने से रोकती थी।

जब सिपाही उसको घसीटकर ले चले और सकीना दरवाजे पर पहुंच गई तो उसने मुड़ कर घर को देखा और ठंडी सांस लेकर कहा, "रुखसत (विदाई) ए ससुराल। मेरे कफन और कब्र से वंचित ससुर को सलाम। मैं इन तलवार चलाने वालों की प्रतिष्ठा हूं। अगर ये जिंदा होते तो अपनी आबरू पर मर मिटते।" सकीना के इन दर्द भरे शब्दों पर सिपाही हंसे और उसको खींचते हुए बाहर चले

गए। सकीना कुछ दूर तो चुपचाप चलती गई। इसके बाद उसने कहा, "मैं जच्चा हूं मुझ पर रहम करो। मैं भूखी हूं। मुझ पर तरस खाओ। मैं तुम्हारे मुल्क की हूं, मैं तुम्हारे मजहब की हूं, मैं बेकसूर हूं।"

यह सुनकर चारों सिपाही रुक गए और उन्होंने अफसोस भरी आवाज में कहा, "तू मत घबरा। तेरे लिए सवारी लाते हैं।" यह कहकर तीन सिपाही रुक गए और एक जख्मी ले जाने वाली गाड़ी लाया जिसमें सकीना को डालकर पहाड़ी पर कैंप में ले गए।

किसी को नहीं मालूम कि गदर के दिनों में प्रसूता सकीना पर साल कैसे गुजरे और वह कहां-कहां रही और उसने कैसी-कैसी मुसीबतें उठाईं। हमने जब उसको देखा तो वह रोहतक के एक मुहल्ले में भीख मांग रही थी। उसके पांव में जूती नहीं थी। उसका पायजामा फटा हुआ था, उसका कुर्ता बहुत मैला और उस पर पैबंद लगे हुए थे। सिर का दुपट्टा फटकर चिथड़ा-सा मालूम होता था। ऐसा लगता था कि वह बहुत दिनों से भूखी है। चमड़ी हड्डियों से चिपक गई थी। आंखों के गिर्द काले दायरे बने हुए थे। सिर के बाल उलझे हुए थे। चेहरे पर सौंदर्य था मगर लुटा हुआ। आंखों में खुदा की दी हुई सज्जा मौजूद थी लेकिन उजड़ी हुई तथा सताई हुई। वह चलते हुए चकराती थी और दीवार पर हाथ रखकर सिर झुका लेती थी। उसके पांव लड़खड़ाते तो वह कुछ वक्त के लिए रुककर सांस लेती थी और फिर आगे बढ़ती थी।

थोड़ी दूर जाकर एक घर आया जहां शादी हो रही थी। सैकड़ों आदमी खाना खाकर बाहर आ रहे थे। वह वहां ठहर गई और उसने बहुत दर्दनाक आवाज में कहा, "फलक (आकाश) की सताई हूं। बड़े घर की जाई हूं। इज्जत गंवाकर शर्म मिटाकर रोटी खाने आई हूं। भला हो साहिब, रोटी का टुकड़ा मुझे भी दो। सेहरे की खैर, घोड़े की खैर, जोड़े की खैर। एक निवाला मुझको भी।"

सकीना की आवाज, फकीरों के शोर-शराबे में किसी ने नहीं सुनी। बल्कि एक नौकर ने, जो शादी का बंदोबस्त करने वालों में था, उसको ऐसा धक्का दिया कि बेचारी चित्त होकर गिर पड़ी और गिरते वक्त बेबसी में उसने कहा, "मैंने तीन दिन से कुछ नहीं खाया। मुझे न मार! मैं खुद किस्मत की मारी हूं। या खुदा, मैं कहां जाऊं। अपनी विपदा किसको सुनाऊं।" यह कहकर वह रोने लगी। एक लड़का खड़ा यह सब कुछ देख रहा था। उसको सकीना पर तरस आया और वह बेबस-सा रोने लगा। उसने सकीना को सहारा देकर उठाया और कहा, "आओ मेरे साथ चलो। मैं तुमको रोटी दूं।"

सकीना लड़के की मदद से मुश्किल से उठी। लड़का नजदीक ही एक घर में नौकर था। वह उसको वहां ले गया और शादी वाले घर से आया हुआ अपने हिस्से का खाना उसके आगे रखा। सकीना ने दो ग्रास खाए और पानी पीया। आंखों में दम आया तो लड़के को हजार-हजार दुआएं देने लगी।

अब जो उसने लड़के को ध्यान से देखा तो उसके दिल में धुआं-सा उठा और वह बेबस-सी लड़के के गले लगकर रोने लगी। लड़का भी सकीना को लिपट कर व्याकुल-सा हो उठा। सकीना ने पूछा, "तू किसका बच्चा है?" वह बोला, "मेरी मां इस घर की मामी है और मैं भी यहीं नौकर हूं।" सकीना ने पूछा, तुम्हारी मां कहां है?" लड़के ने जवाब दिया, "वह और नानी दोनों शादी में गई हुई हैं, उन चौधराईन के साथ जिनकी वह नौकर है।"

सकीना यह सुनकर चुप हो गई। लेकिन वह सोचती थी कि इस लड़के पर उसे ऐसी मुहब्बत क्यों आ रही है। बेशक उसने उस पर दया की, लेकिन किसी की दया से आदमी का दिल बेकरार और व्याकुल नहीं हो उठता।

इतने में लड़के की मां और नानी घर में आईं तो सकीना ने फौरन पहचान लिया कि लड़के की नानी सकीना की मामी है जो गदर में उसके बच्चे को लेकर भाग आई थी। मामी ने सकीना को नहीं पहचाना। लेकिन सकीना ने उसका नाम लेकर पुकारा और अपना नाम और हाल उसको बताया तो मामा उससे लिपट गई और रोने लगी।

लड़के को मालूम हुआ कि वह दरअसल सकीना का बेटा है तो वह फिर दोबारा सकीना से लिपट कर रोने लगा। सकीना ने अपने बच्चे को छाती से लगाकर आसमान को देखा और कहा, "शुक्र ए परवरदिगार। एहसान ए मौला कि गदर की तबाही में मेरे बच्चे को जिंदा रखा और बारह साल के बाद मुझ कुबड़ी के दिन फेर दिए।"

इसके बाद सकीना ने फरूखाबाद अपने मायके में पत्र भिजवाया। वहां उसके मां-बाप मर चुके थे। तीन भाई जिंदा थें। वे रोहतक आए और बहन और भानजे को अपन साथ ले गए। लड़के के मामा और उसकी लड़की यानी अपने पालने वाली को साथ ले लिया और फरूखाबाद जाकर ठाट से जिंदगी बसर करने लगे।

सब्ज़पोश

दिल्ली के वे बूढ़े जो सन् 1857 के गदर में जवान थे आमतौर पर यह कहानी सुनाते हैं कि जिस जमाने में अंग्रेजी फौज ने पहाड़ी पर मोर्चे बनाए थे और कश्मीरी दरवाजे की तरफ से दिल्ली शहर पर गोलाबारी की जाती थी एक बुढ़िया मुसलमान औरत सब्ज लिबास पहने हुए शहर के बाजारों में आती और ऊंची तथा गरजदार आवाज में कहती, "आओ चलो, खुदा ने तुमको जन्नत में बुलाया है।"

शहर के वासी यह आवाज सुनकर उसके आसपास इकट्ठे हो जाते थे और यह उन सबको लेकर कश्मीरी दरवाजे पर हमला करती और शहरियों को सवेरे से शाम तक खूब लड़ाती।

कुछ लोग, जिन्होंने यह सब कुछ अपनी आंखों से देखा है, कहते हैं कि वह औरत बहुत बहादुर और दिलेर थी। उसको मौत का बिल्कुल डर नहीं था। वह गोलों और गोलियों की बौछार में बहादुर सिपाहियों की तरह आगे बढ़ी चली जाती थी। कभी उसको पैदल देखा जाता था और कभी घोड़े पर सवार। उसके पास तलवार और बंदूक और एक झंडा होता था। वह बंदूक बहुत अच्छी चलाती थी। जो लोग उसके साथ पहाड़ी के मोर्चे तक गए थे उनमें से एक व्यक्ति ने कहा कि वह तलवार चलाने की कला में भी बहुत निपुण थी। और कई बार देखा गया कि उसने सामने वाली फौज से आमने-सामने तलवार से लड़ाई लड़ी।

उस औरत की दिलेरी और हिम्मत को देखकर शहर की जनता में बहुत जोश पैदा हो जाता था और वे बढ़-बढ़कर हमले करते थे। क्योंकि उन्हें लड़ाई का अभ्यास नहीं था इसलिए प्रायः उन्हें भागना पड़ता था। और जब वे भागते थे तो यह औरत उनको बहुत रोकती और आखिर मजबूर होकर खुद भी वापस चली आती। लेकिन वापस आने के बाद फिर किसी को यह पता न होता कि वह कहां

चली जाती है और फिर कहां से आती है।

आखिर इसी तरह एक दिन ऐसा हुआ कि वह जोश से भरी हुई हमला करती, बंदूक से गोलियां दागती और तलवार चलाती मोर्चे तक पहुंच गई और वहां जख्मी होकर घोड़े से गिर गई। अंग्रेजी फौज ने उसको गिरफ्तार कर लिया। फिर किसी को यह मालूम नहीं हो सका कि वह कहां गई और उसका अंत क्या हुआ।

सूबा दिल्ली की सरकार ने अंग्रेजी के कुछ पत्र प्रकाशित किये हैं जो दिल्ली के घेराव के दिनों अंग्रेजी फौज के अफसरों ने लिखे थे। इन पत्रों में एक पत्र में लेफ्टीनेंट डब्ल्यू. एस.आर. हडसन साहिब का है जो उन्होंने दिल्ली कैंप से 29 जुलाई 1857 को मिस्टर जे. गिलसन फारसाइथ, डिप्टी कमिश्नर, अंबाला के नाम भेजा था। इस पत्र में मुसलमान बुढ़िया के बारे में कुछ जानकारी दी गई है। पत्र का मंतव्य कुछ ऐसे है :

माइ डीयर फारसाइथ। मैं तुम्हारे पास एक बुढ़िया मुसलमान औरत को भेज रहा हूं। यह विचित्र प्रकार की औरत है। यह सब्ज लिबास पहनकर शहर के लोगों को विद्रोह के लिए उकसाती थी और खुद हथियार लेकर उनकी कमान करती हुई हमारे मोर्चे पर हमले करती थी।

जिन सिपाहियों से इसका सामना हुआ है वे कहते हैं कि इसने कई बार बहुत दिलेरी और पौरुष से हमले किये और बहुत मुसतैदी से हथियार चलाए और इसमें पांच पुरुषों के बराबर शक्ति है।

जिस दिन यह गिरफ्तार हुई उस दिन यह घोड़े पर सवार थी और शहर के विद्रोहियों को सैनिक प्रयोजन से लड़ा रही थी। इसके पास बंदूक थी जिससे इसने बहुत से निशाने मारे। सिपाही कहते हैं कि तलवार और बंदूक से इसने खुद भी हमारे बहुत से आदमियों को हताहत किया लेकिन जैसी कि आशा थी इसके साथी भाग गए और यह जख्मी होकर गिरफ्तार हुई। जनरल साहिब के सामने पेश हुई और उन्होंने औरत समझकर इसको मुक्त कर देने का आदेश दिया। लेकिन मैंने उनको रोका और कहा, अगर इसे मुक्त कर दिया गया तो यह शहर में जाकर अपनी अदृश्य शक्ति का दावा करेगी और विश्वास से आशक्त लोगों को इसकी मुक्ति किसी दैवी शक्ति का परिणाम मालूम होगी और संभव है कि इससे यह औरत फ्रांस की उस मशहूर औरत की तरह हमारे लिए कठिनाईयां पैदा कर दे जिसका जिक्र फ्रांस की क्रांति के इतिहास में दिया गया है। (फ्रांस की क्रांति के दिनों जोन आफ आरक नाम की एक स्त्री इसी प्रकार दुश्मनों से लड़ती थी और हजारों आदमी उसको दैवी शक्तियों का प्रतीक मानकर उसके साथ हो गए थे जिससे बहुत घमासान लड़ाई

हुई थी और बहुत खून बहा था। आम जनता यह समझती थी कि वह स्त्री कभी नहीं मरेगी। अंत में फ्रांस की प्रतिद्वंद्वी सेना ने उसको जीवित जला दिया था। तब कहीं जाकर यह उपद्रव दबा था। उसी औरत की ओर पत्र में संकेत किया गया है। — हसन निजामी)

जनरल साहब ने मेरी बात स्वीकार की और इस औरत को कैद करने का निर्णय किया गया। इसलिए इस औरत को आपके पास भेजा जा रहा है। आशा है कि आप इसको कैद में रखने का उचित प्रबंध करेंगे क्योंकि यह डायन बहुत ही खतरनाक औरत है — हडसन।

बहादुर शाह ज़फ़र

मेरी स्वर्गीय माता जी ने अपने पूज्य पिता हजरत शाह गुलाम हसन साहिब से सुनी हुई कहानी बताई थी कि जिस दिन बहादुर शाह दिल्ली के किले से निकले तो सीधे दरगाह हजरत निजामुद्दीन औलिया में हाजिर हुए। उस वक्त बादशाह पर अजीब मायूसी और डर छाया हुआ था। कुछ गिने-चुने ख्वाजा सराओं और हवादार (मर्दों के बैठने की पालकी) के कहारों के सिवाय कोई आदमी साथ नहीं था। चिंता और डर से बादशाह का चेहरा उतरा हुआ था और मिट्टी और गर्द सफेद दाढ़ी पर जमी हुई थी। बादशाह के आने की खबर सुनकर नाना साहिब दरगाह शरीफ में हाजिर हुए। देखा कि मजार मुबारक के सिरहाने दरवाजे से टेक लगाए बैठे हैं। मुझको देखते ही जैसा कि हमेशा होता था, चेहरे पर मुस्कराहट आई। फिर कहा, "मैंने तुमसे पहले ही कह दिया था कि यह कमबख्त बागी सिपाही मुंजोर है और उस पर विश्वास करना गल्ती है। खुद भी डूबेंगे और मुझको भी ले डूबेंगे। आखिर वही हुआ। भाग निकले भाई, अगरचे मैं एक ऐसा फकीर हूं जिसने मोह-माया त्याग दी है लेकिन फिर भी उस खून की यादगार हूं जिसमें आखिरी दम तक मुकाबला करने की हिम्मत होती है। मेरे बाप-दादाओं पर इससे ज्यादा बुरे वक्त पड़े और उन्होंने हिम्मत नहीं हारी। लेकिन मुझे तो परोक्ष से ही अंत दिखा दिया गया। अब इसमें शक की कोई गुंजाइश नहीं कि मैं हिंदुस्तान के तख्त पर तैमूर की आखिरी निशानी हूं। मुगल हुकूमत का चिराग दम तोड़ रहा है और कोई घड़ी का मेहमान। फिर जानबूझ कर बेवजह क्यों खून बहाऊं? इसलिए किला छोड़कर चला आया। मुल्क खुदा का है। जिसको चाहे दे। सैकड़ों बरस हमारी नस्ल ने हिंदुस्तान पर हिम्मत से अपना सिक्का चलाया। अब दूसरों का वक्त है। वे हुकूमत करेंगे, बादशाह कहलाएंगे। और हम उनके हाथों पराजित कहलाएंगे। यह कोई

अफसोस की बात ही है। आखिर हमने भी तो दूसरों को मिटाकर अपना घर बसाया था।" इन निराशा भरी बातों के बाद बादशाह ने एक संदूक दिया और कहा कि लो यह आपके हवाले है। अमीर तैमूर ने जब कुस्तुनतुनिया पर विजय पाई तो सुल्तान जलदरम बायजीद के खजाने से यह अमूल्य चीज हाथ लगी थी। इसमें हजूर हजरत मुहम्मद की मुबारक दाढ़ी के पांच बाल हैं जो आज तक हमारे खानदान में एक पवित्र और अमूल्य उपहार के रूप में चले आए हैं। अब मेरे लिए, जमीन और आसमान में कहीं ठिकाना नहीं। इनको लेकर कहां जाऊं? आपसे बढ़कर कोई इसका हकदार नहीं है। लीजिए, इनको रखिए। यह मेरे दिल और आंखों की ठंडक है जिनको आज के दिन की भयानक मुसीबत में अपने से जुदा करता हूं। नाना साहिब ने संदूक ले लिया और दरगाह शरीफ के तोशाखाने में रख दिया जो अब तक मौजूद है और अन्य पवित्र और अमूल्य वस्तुओं की तरह हर साल सन् हिजरी के तीसरे महीने में श्रद्धालुओं को दर्शन कराए जाते हैं।

नाना साहिब से बादशाह ने कहा कि आज तीन वक्त से खाना खाने का अवसर नहीं मिला। अगर घर में कुछ तैयार हो तो लाओ। नाना साहिब ने कहा कि वे लोग भी मौत के किनारे खड़े हैं। खाना पकाने का होश नहीं। घर जाता हूं। जो कुछ मौजूद है, हाजिर करता हूं। बल्कि आप खुद तशरीफ ले चलें। जब तक मैं जिंदा हूं और मेरे बच्चे सलामत हैं, आपको कोई शख्स हाथ नहीं लगा सकता। हम मर जाएंगे तो इसके बाद ही आप पर कोई और वक्त आ सकेगा।

बादशाह ने कहा, "आपका एहसान, जो आप ऐसा कहते हैं लेकिन बूढ़े शरीर की हिफाजत के लिए अपने पीरों की औलाद को कत्लगाह (वध स्थान) में भेजना मुझे कभी गवारा न होगा। दर्शन कर चुका, अमानत सौंप दी, अब दो निवाले (ग्रास) हजरत औलिया के लंगर से खा लूं तो हुमायूं के मकबरे में चला जाऊंगा। वहां जो किस्मत में लिखा है पूरा हो जाएगा।

नाना साहिब घर आए और पूछा कि कुछ खाने को मौजूद है? कहा गया कि बेसनी रोटी और सिरके की चटनी है। चुनांचे वह एक ख्वान (एक बड़ा थाल जिसको कपड़े से ढांपा हुआ था) सजाकर ले आए। बादशाह ने चने की रोटी खाकर तीन वक्त के बाद पानी पिया और खुदा का शुक्र किया। इसके बाद हुमायूं के मकबरे में जाकर गिरफ्तार हुए और रंगून भेज दिए गए। रंगून में भी बादशाह के दरवेशों जैसे जीवन में कोई फर्क न आया। वह जब तक जिंदा रहे, एक संतुष्ट, कालतुष्ट और अल्लाह पर भरोसा रखने वाले दरवेश की तरह अपना वक्त गुजारते रहे।

मिर्जा नसीर-उल-मुल्क

यह दिल्ली है जिसको हिंदुस्तान का दिल और हकूमत की राजधानी कहते हैं। जब आबाद थी और लालकिले में मुगलों की आखिरी शमा टिमटिमा रही थी और जब मुसीबत सिर पर आई तो इसके रहने वालों के आचार भी बदल गए।

जब हाकिमों के आचार बदले तो जनता भी दुराचारी हो गई। नतीजा यह हुआ कि राजा और प्रजा दोनों बरबाद हो गए। मिसालें हजारों हैं लेकिन मैं एक शिक्षाप्रद कहानी सुना कर हिंदुस्तान के वासियों को, खास तौर पर मुसलमानों और सूफियों को खुदा के खौफ से डराता हूं।

गदर से एक साल पहले दिल्ली से बाहर जंगल में कुछ शहजादे शिकार खेलते फिरते थे और बेपरवाही से छोटी-छोटी चिड़ियों और फाख्ताओं को, जो दोपहर की धूप से बचने के लिए पेड़ों की हरी भरी टहनियों पर खुदा की याद में लौ लगाए बैठी रहतीं, गुलेंले मार रहे थे। सामने से पैबंद लगा चोगा पहने एक फकीर आ निकला और उसने बहुत अदब से शहजादों को सलाम किया और कहा, "मियां साहिबजादो, इन बेजबान जानवरों को क्यों सताते हो? इन्होंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है? इनके भी जान हैं और यह भी तुम्हारी तरह दुख और तक्लीफ महसूस करते हैं लेकिन बेबस हैं इसलिए मुंह से कुछ नहीं कह सकते। तुम बादशाह की औलाद हो। बादशाहों को अपने मुल्क के रहने वालों पर मुहब्बत और मेहरबानी करनी चाहिए। यह जानवर भी मुल्क में रहते हैं। इनके साथ भी न्याय और दया का बर्ताव किया जाए तो बादशाह की शान बढ़ेगी।

बड़े शहजादे ने, जिसकी उम्र 18 साल थी, शरमा कर गुलेल हाथ से रख दी। लेकिन छोटे शहजादे मिर्जा नसीर-उल-मुल्क बिगड़ कर बोले, "जा रे जा, दो टके का आदमी हमको उपदेश देने निकला है। तू कौन होता है हमको समझाने वाला,

सैर और शिकार सब करते हैं। हमने किया तो कौन सा गुनाह कर दिया।" फकीर बोला, "साहिबे आलम (बादशाह के लिए संबोधन)! नाराज न हों, शिकार ऐसे जानवरों का करना चाहिए कि एक जान जाए तो दस-पांच जनों का पेट तो भरे। इन नन्हीं नन्हीं चिड़ियों के मारने से क्या मिलेगा। बीस मारोगे तब भी एक आदमी का पेट नहीं भरेगा?" नसीर मिर्जा फकीर के दोबारा बोलने से बहुत गुस्से में आ गए और गुलेल खींच कर फकीर के घुटने में इस जोर से मारी कि बेचारा मुंह के बल गिर पड़ा और बेअख्तियार उसके मुंह से निकला, "हाय टांग तोड़ डाली।"

फकीर के गिरते ही शहजादे घोड़ी पर सवार होकर किले की तरफ चले गए और फकीर घिसटता हुआ सामने कब्रिस्तान की तरफ चलने लगा। घिसटता जाता था और कहता जाता था, "यह तख्त क्योंकर आबाद रहेगा जिसके मालिक इतने जालिम हैं। लड़के तूने मेरी टांग तोड़ दी, खुदा तेरी भी टांगे तोड़े और तुझको भी इस तरह दुख और मुसीबत मिले।

तोपें गरज रही थीं और गोले बरस रहे थे। जमीन पर चारों तरफ लाशों के ढेर नजर आते थे। दिल्ली शहर वीरान और सुनसान होता जा रहा था कि लालकिले से फिर वही कुछ शहजादे घोड़े पर सवार घबराहट में भागते हुए नजर आए और पहाड़गंज की ओर जाने लगे। दूसरी ओर 20-25 गोरे सिपाही धावा करते चले आ रहे थे। उन्होंने कम उम्र के इन सवारों पर एकदम बंदूकें चला दीं। गोलियों ने घोड़ों और सवारों को छलनी कर दिया और यह सब शहजादे जमीन पर गिर कर तड़पने लगे। गोरे जब नजदीक आए तो देखा कि दो शहजादे मर चुके हैं लेकिन एक सांस ले रहा है। एक सिपाही ने जिंदा शहजादे का हाथ पकड़कर उठाया तो मालूम हुआ कि उसके कहीं जख्म नहीं आया। घोड़े से गिरने से मामूली खरोचें आ गई हैं और डर के मारे मूर्छा आ गया है। उसको जिंदा देखकर घोड़े की बागडोर से शहजादे के हाथ बांध दिए गए और बंदी बनाकर सिपाहियों के साथ कैंप में भिजवा दिया गया। कैंप पहाड़ी पर था जहां गोरों के अलावा कालों की फौज भी थी। जब बड़े साहिब को मालूम हुआ कि बादशाह का पोता नसीर-उल-मुल्क है तो वह बहुत खुश हुए और हुक्म दिया कि इसको हिफाजत से रखा जाए।

बागी फौजें हारकर भागने लगीं और अंग्रेजी लश्कर धावा बोलता हुआ शहर में घुस गया। बहादुर शाह हमायूं के मकबरे में गिरफ्तार हो गए। तैमूरी खानदान का

चिराग झिलमला कर बुझ गया। जंगल शरीफ शहजादियों के नंगे सिरों और बेपर्दा चेहरों से आबाद होने लगा। बाप बच्चों के सामने कत्ल होने लगे और माएं अपने जवान बेटों को मिट्टी में लोटता देखकर चीखें मारने लगीं।

ऐसी हालत में पहाड़ी कैंप पर मिर्जा नसीर-उल-मुल्क रस्सी से बंधे बैठे थे कि एक पठान सिपाही दौड़ा हुआ आया और कहा, "मैंने आपकी रिहाई के लिए साहिब से इजाजत ले ली है। जल्दी भाग जाओ। ऐसा न हो कि दूसरी मुसीबत में फंस जाओ।"

मिर्जा बेचारे पैदल चलना क्या जानें! हैरान थे कि क्या करें? लेकिन मरता क्या न करता। पठान का शुक्रिया करने के बाद निकले और जंगल की तरफ हो लिए। वे चल तो रहे थे लेकिन यह खबर न थी कि कहां जा रहे हैं। एक मील चले होंगे कि पैरों में छाले पड़ गए। जबान खुश्क हो गई। गले में कांटे पड़ने लगे। थककर एक पेड़ की छांव में गिर पड़े और आंखों में आंसू भर गए और आसमान की तरफ देखा कि अल्लाह यह क्या मुसीबत हम पर टूटी। हम कहां जाएं, किधर हमारा ठिकाना है? ऊपर निगाह उठाई तो पेड़ पर नजर गई। देखा कि फाख्ता का एक घोंसला बना हुआ है और वह आराम से अपने अंडों पर बैठी है। उसकी आजादी और आराम पर शहजादे को बहुत ईर्ष्या हुई और कहने लगा, "फाख्ता, मुझसे तो तू लाख दर्जे अच्छी है कि आराम से अपने घोंसले में बेफिक्र बैठी है। मेरे लिए तो आज जमीन और आसमान दोनों में कहीं जगह नहीं है।"

मिर्जा दिलदार शाह

मिर्जा दिलदार शाह बयान करते थे कि जब बहादुर शाह हजरत के साहिबजादे मिर्जा मुगल और दूसरे शहजादे गोली से मारे गए और उनके सिर काटकर सामने लाए गए तो बादशाह ने ख्वान (बड़ा थाल) में कटे हुए सिर देखकर बहुत बेपरवाही से फरमाया। "अल्लाह का शुक्र है कि सफल होकर सामने आए। मर्द लोग इसी दिन के लिए बच्चे पालते हैं।"

जो साहिब खबर लाए थे वे बोले, "क्यों जनाब, गदर में आपकी क्या उम्र होगी?" मिर्जा दिलदार शाह ने कहा, "कोई चौदह पंद्रह साल की। मुझे सारी घटनाएं अच्छी तरह याद हैं। बाबा जान हमको लेकर गाजियाबाद जा रहे थे कि हिंडन नदी पर फौज ने हमको पकड़ लिया। मां और मेरी छोटी बहन चीखे मारकर रोने लगीं। पिता ने उनको रोका और आंख बचा कर सिपाही की तलवार उठा ली। तलवार हाथ में लेनी थी कि सिपाही चारों तरफ से उन पर टूट पड़े। उन्होंने दो चार को जख्मी किया लेकिन संगीनों और तलवारों के इतने वार उन पर हुए की बेचारे टुकड़े-टुकड़े होकर गिर पड़े और शहीद हो गए।

"उनकी शहादत के बाद सिपाहियों ने मेरी बहन और मां के कानों को नोच लिया और जो कुछ उनके पास था छीनकर चलते बने। मुझको उन्होंने कैद करके साथ ले लिया।

"जिस वक्त मैं अपनी मां से जुदा हुआ। उनकी चीख-पुकार से आसमान हिल रहा था। वह कलेजे को थामे हुए चीखती थीं और कहती थीं – अरे, मेरे लाल को छोड़ दो। तुमने मेरे पति को मिट्टी में सुला दिया। इस अनाथ पर तो रहम करो। मैं रंडिया (विधवा) किस के सहारे रंडापा काटूंगी? अल्लाह मेरा कलेजा फटा जाता है। मेरा दिलदार कहां जाता है? कोई अकबर और शाहजहां को कब्र

से बुलाए और उनके घराने की दुखिया की विपदा सुनाए। देखो मेरे दिल के टुकड़े को मुट्ठी में मसल देते हैं। अरे, कोई आओ। मेरी गोदियों का पाला मुझको मिलवाओ।

"मेरी छोटी बहन आका भाई कहती हुई मेरी तरफ दौड़ी लेकिन सिपाही घोड़ों पर सवार होकर चल दिए और मुझको बागडोर से बांध लिया। घोड़े दौड़ते थे, तो मैं भी दौड़ता था। पांव लहूलुहान हो गए थे, दिल धड़कता था। और दम उखड़ता जाता था।"

पूछा कि मिर्जा यह बात रह गई। "फिर तुम्हारी मां और बहन का क्या हुआ।" मिर्जा ने कहा, "आज तक उनका पता नहीं लगा। ख़बर नहीं उन पर क्या बीती और कहां गईं? मुझको सिपाही अपने साथ दिल्ली लाए और यहां से इंदौर ले गए। मुझसे घोड़े मलवाते थे और उनकी लीद साफ कराते थे।

मिर्जा क़मर सुल्तान

दिल्ली की जामा मस्जिद से जो रास्ता मटिया महल और चितली कबर होता हुआ दिल्ली दरवाजे की तरफ गया है वहां एक मुहल्ला कल्लू ख्वास की हवेली के नाम से मशहूर है। इस मुहल्ले से हर रोज रात को अंधेरा हो जाने के बाद एक फकीर बाहर आता है और जामा मस्जिद तक जाता है। फिर वहां से वापस चला आता है।

इस फकीर का कद बहुत लंबा है, शरीर दुबला है, दाढ़ी खिचड़ी और सफेद है, गाल पिचके हुए हैं। आंखों से दिखाई नहीं देता है। मैला पैबंद लगा हुआ एक पायजामा है। टूटी हुई जूतियां, जिनको लीतड़ा कहना चाहिए, पैरों में हैं। कुर्ता बहुत मैला है। इसमें भी दस बारह पैबंद हैं। सिर पर लंबे बाल हैं लेकिन बहुत उलझे हुए। फटी हुई एक टोपी सिर पर रखी है। फकीर के एक हाथ में बांस की लंबी लकड़ी है और दूसरे हाथ में मिट्टी का प्याला है जिसका एक किनारा टूटा हुआ है। फकीर के चेहरे से मालूम होता है वह या तो चांडू पीता है या कई महीने के बाद आज ही उठा है क्योंकि चेहरे पर पीलापन छाया हुआ है। जब चलता है तो दाएं पांव को घसीट कर कदम उठाता है। शायद उसे कभी पाक्षाघात का रोग हो गया था।

उसकी आवाज बहुत ऊंची और दर्दनाक है। जब वह बहुत मायूस लहजे में ऊंची आवाज में कहता है, 'अल्लाह एक पैसे का आटा दिलवा दे। तू ही देगा' तो बाजार वाले और बाजार के नजदीक जितने घर हैं, उनके रहने वाले उसकी आवाज से अपने आप बहुत प्रभावित हो जाते हैं। यद्यपि उनमें से दो चार के सिवा कोई नहीं जानता कि यह फकीर कौन है और इसकी आवाज में इतना दर्द क्यों है। कई घरों की औरतें तो यह कहने लगती हैं कि शाम हुई नहीं कि यह मनहूस आवाज

कानों में आई। हमारा तो कलेजा फट जाता है जब यह आवाज सुनते हैं। पता नहीं कौन फकीर है, जो हमेशा रात के वक्त भीख मांगने निकलता है और दिन को इसकी आवाज कभी नहीं आती।

फकीर जब कल्लू ख्वास की हवेली से बाजार में आता है तो सीधा जामा मस्जिद की तरफ लकड़ी टेकता हुआ अपने दाएं पांव को खींचता हुआ टूटे हुए लीतड़ों से मिट्टी उड़ाता हुआ आहिस्ता-आहिस्ता चला जाता है। एक एक मिनट के बाद उसकी जबान से बस यही आवाज उठती है, "या अल्लाह, एक पैसे का आटा दिलवा दे।"

फकीर किसी दुकान पर या किसी व्यक्ति के सामने ठहरता नहीं। सीधा चलता रहता है। अगर किसी राहगीर को या दुकानदार को तरस आ गया तो उसने फकीर के प्याले में पैसा या आटा या और कुछ खाने की चीज डाल दी तो फकीर ने बस इतना कहा, 'भला हो बाबा, खुदा तुमको बुरा वक्त न दिखाए' और आगे बढ़ गया। अंधा होने की वजह से देख नहीं सकता कि उसको भिक्षा देने वाला कौन था और कौन है।

जामा मस्जिद से वापसी के वक्त भी यही आवाज लगाता हुआ कल्लू ख्वास की हवेली में आ जाता है। इस हवेली में गरीब मुसलमानों के बहुत से अलग अलग छोटे-छोटे मकान हैं। इन्हीं मकानों में बहुत ही छोटा टूटा फूटा मकान इस फकीर का भी है। घर के दरवाजे में वापस आता है तो किवाड़ों की सांकल खोलकर अंदर जाता है। इस मकान में सिर्फ एक दालान है और कोठरी है और पाखाना है और छोटा सा आंगन है। दालान में एक टूटी हुई चारपाई है और फर्श पर एक फटा हुआ कंबल बिछा हुआ है।

दिल्ली वालों को मालूम ही नहीं कि यह फकीर कौन है। बस दो चार जानने वाले जानते हैं कि यह बहादुर शाह बादशाह का पौत्र है और इसका नाम मिर्जा कमर सुल्तान है। गदर से पहले खूबसूरत जवान था और किले में इसके सौंदर्य और लंबे सजीले कदकाठ की बहुत धूमधाम थी। घोड़े पर सवार होकर निकलता था तो किले की औरतें और दिल्ली के बाजार वाले रास्ता चलते-चलते खड़े हो जाते थे और इसकी खूबसूरती को देखते थे। सब लोग झुक-झुककर सलाम करते थे।

किसी ने पूछा "मिर्जा तुम दिन को बाहर क्यों नहीं आते?" शहजादा क़मर सुल्तान ने जवाब दिया, "जिन बाजारों में मेरी अच्छी सूरत और शानदार सवारी की धूम मचा करती थी उन बाजारों में यह बुरी हालत लेकर दिन के वक्त शर्म

आती है। इसलिए रात को निकलता हूं और सिर्फ खुदा से मांगता हूं और उसी के आगे हाथ फैलाता हूं।"

फिर किसी ने कहा, "मिर्जा, क्या अफीम की आदत भी है?" तो शहजादा कमर सुल्तान जवाब देता, "जी हां, बुरी संगत के कारण अफीम की आदत भी पड़ गई है और कभी कभी चांडू भी पी लेता हूं।"

फिर पूछा गया कि गदर से लेकर आज तक तुम पर क्या गुजरी? कुछ इसका हाल तो सुनाओ? तो क़मर सुल्तान एक ठंडा सांस लेकर चुप हो जाता है और कुछ देर के बाद कहता है, "कुछ न पूछो, सपना देख रहा था कि आंखें खुल गईं। अब जाग रहा हूं और फिर वह सपना कभी नजर नहीं आया और न ही उसके नजर आने की उम्मीद है।"

तरंग प्रिंटर्स, लक्ष्मी नगर, दिल्ली द्वारा मुद्रित